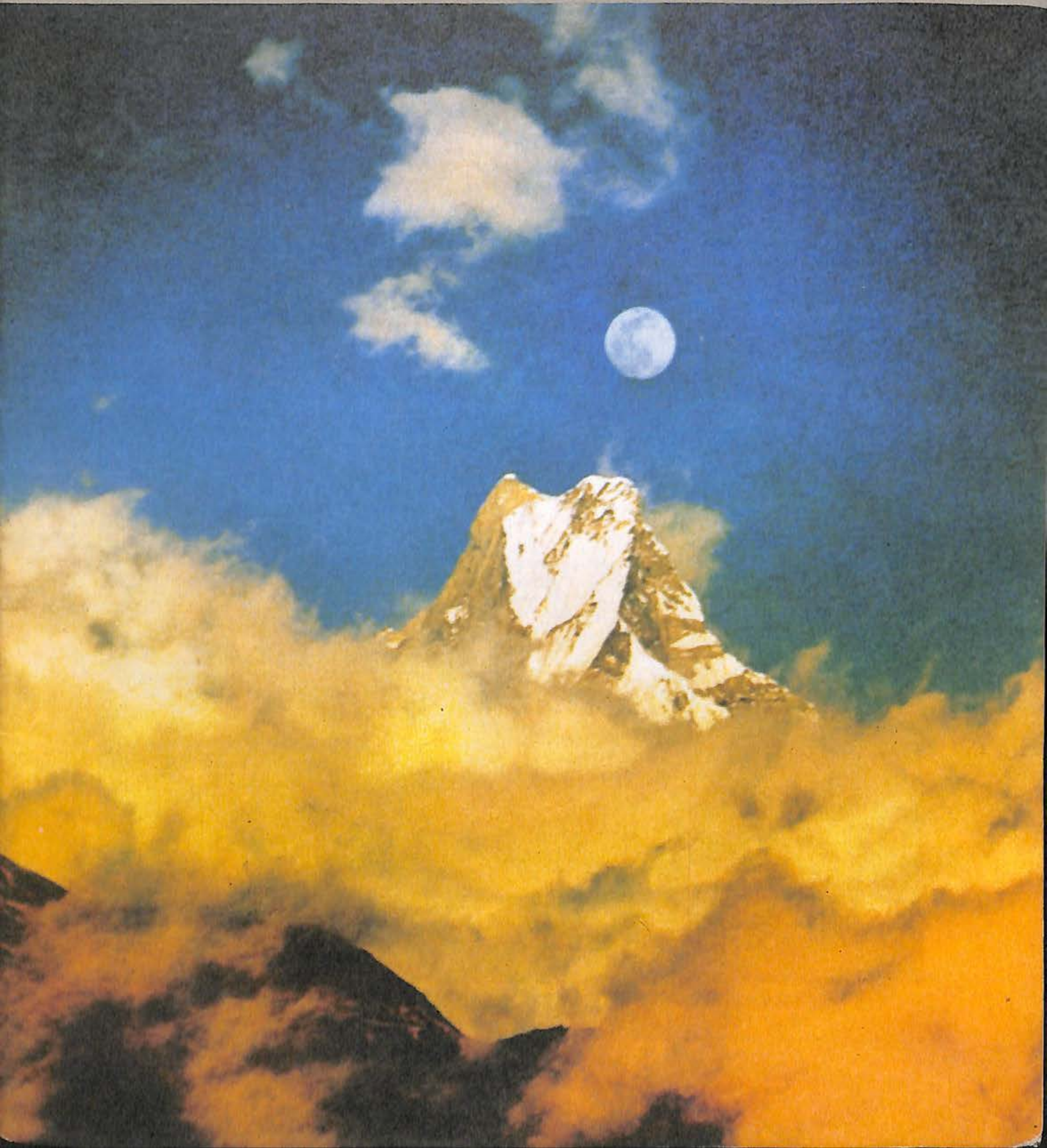
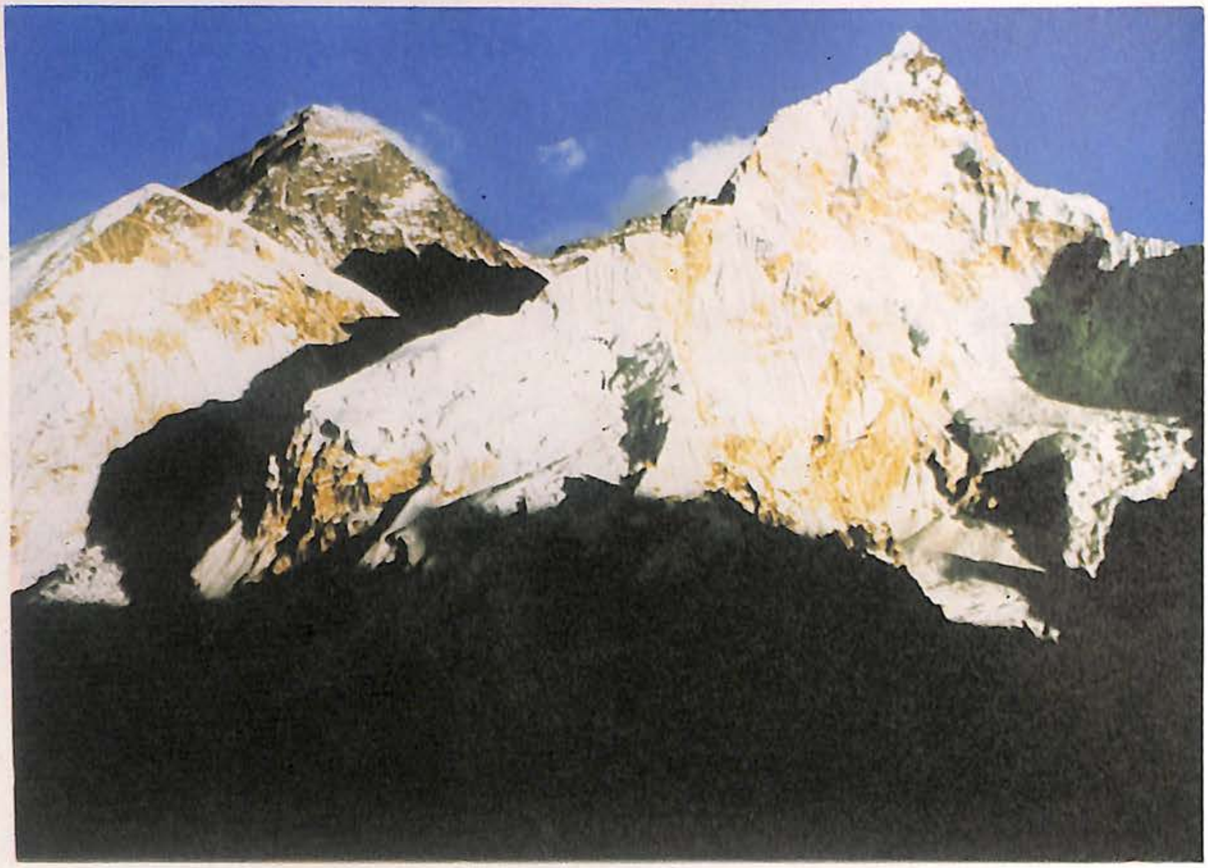
चकमक

जून, 1990

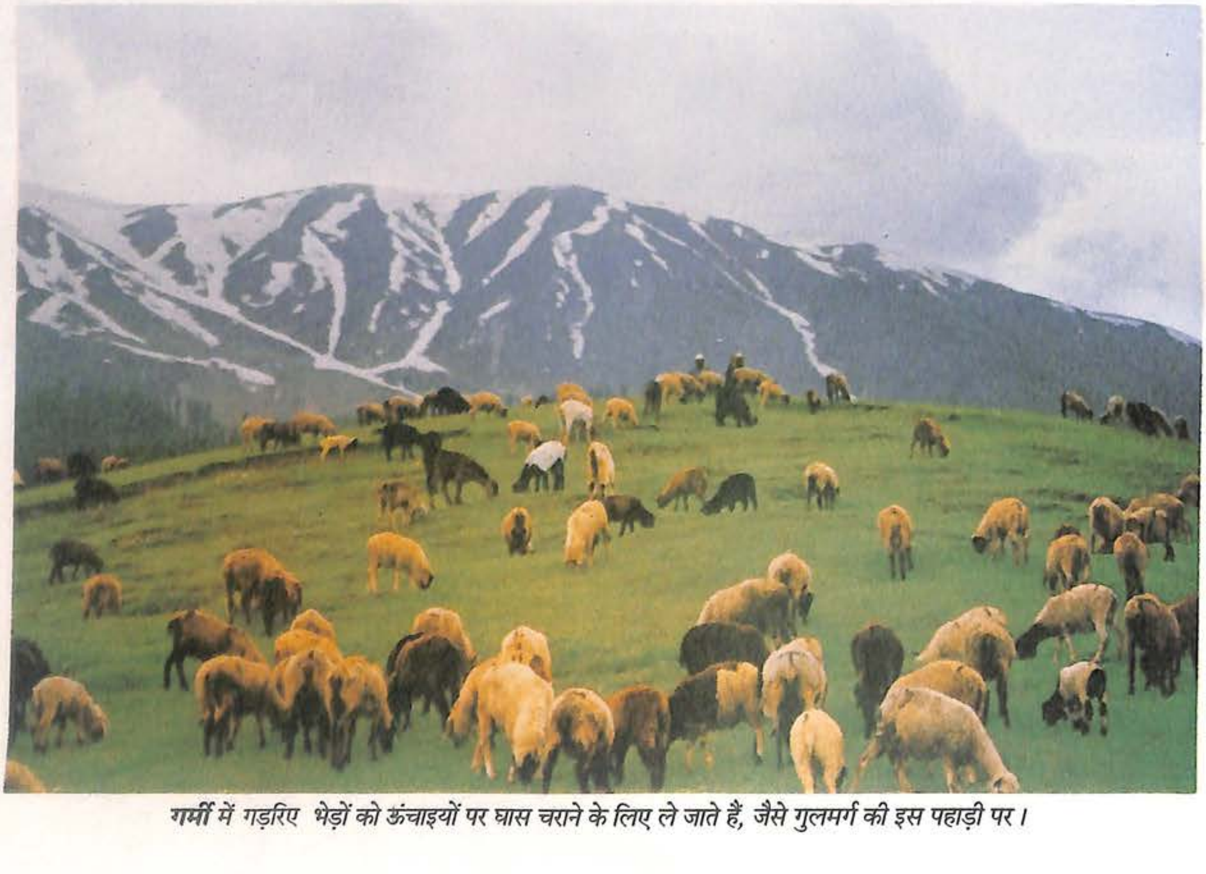
बाल विज्ञान पत्रिका

रु. 4.00

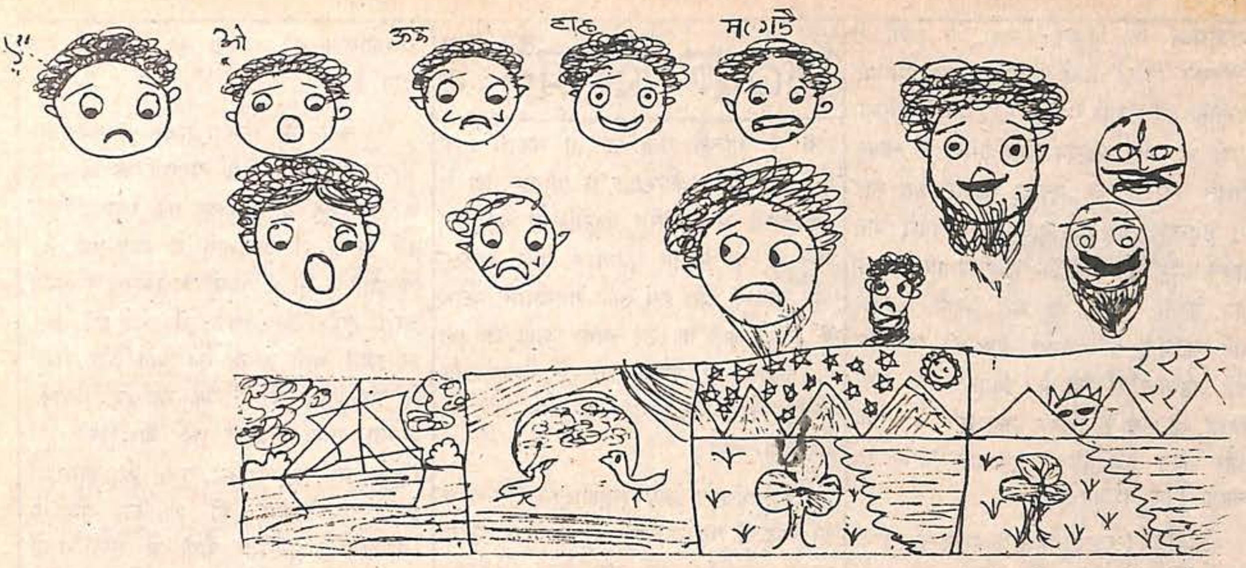




माउंट एवेरेस्ट जाड़े में। एवेरेस्ट शिखर बीच में है। दाएं नुप्तसे शिखर है।



गर्मी में गड़रिए भेड़ों को ऊंचाइयों पर घास चराने के लिए ले जाते हैं, जैसे गुलमर्ग की इस पहाड़ी पर।



प्रियासिंह, आठवीं, विदिशा

इस अंक में

आवरण

नेपाल व तिब्बत के बीच घोड़ापानी दर्रे से लिया गया मच्छापुछारे पर्वत का चित्र। शिखर के ऊपर चंद्रमा भी दिख रहा है। यात्री यहां रुककर विश्राम करते हैं और घोड़ों को पानी पिलाते हैं—इसीलिए दर्रे का नाम घोड़ापानी पड़ा।

पिछला आवरण

नंगा पर्वत के पास रख्योट ग्लेशियर के उत्तर में एक जगह जहां घास, पेड़ व सफ़ेद चोटियां मिलकर एक बेहद ख़ूबसूरती का अहसास दिलाती हैं।

संपादक
विनोद रायना
सह-संपादक
राजेश उत्साही
कला
जया विवेक
उत्पादन/वितरण
हिमांशु बिस्वास, कमलसिंह
विज्ञापन
इला मिश्र

चकमक का चंदा
एक प्रति : चार रुपए
छमाही : बीस रुपए
वार्षिक : चालीस रुपए
डाक खर्च मुफ्त
चंदा, मनीऑर्डर या बैंक ड्राफ्ट से एकलव्य के नाम पर भेजें।
कृपया चेक न भेजें।

पत्र/चंदा/रचना भेजने का पता :
एकलव्य,
ई-1/208, अरेरा कॉलोनी,
भोपाल-462 016 (म.प्र.)

कागज़ : 'यूनिसेफ़' के सौजन्य से।
सहयोग : राष्ट्रीय विज्ञान व प्रौद्योगिकी संचार परिषद (विज्ञान व प्रौद्योगिकी विभाग, नई दिल्ली)

एकलव्य एक स्वैच्छिक संस्था है जो शिक्षा, जनविज्ञान एवं अन्य क्षेत्रों में कार्यरत है। चकमक, एकलव्य द्वारा प्रकाशित अव्यवसायिक पत्रिका है। चकमक का उद्देश्य बच्चों की स्वाभाविक अभिव्यक्ति, कल्पनाशीलता, कौशल और सोच को स्थानीय परिवेश में विकसित करना है।

चकमक के अप्रैल 1990 के अंक में 'इंडियन रेअर अर्थ्स लिमिटेड' का विज्ञापन देखकर क्षोभ हुआ। मैं दो साल पहले कोल्लम गया था, वहा इंडियन रेअर अर्थ्स के चावरा स्थित कारखाने के मज़दूर पिछले छह माह से हड़ताल पर बैठे हुए मिले। उनसे बात करने पर मालूम हुआ कि काम की परिस्थितियों को बेहतर बनाने हेतु एवं अपने निकाले गए साथियों को वापस लेने की मांग पर यह हड़ताल हो रही है। निकाले गए सभी साथी भी इस ख़तरनाक कारखाने में सुरक्षा और काम की बेहतर सुविधाएं मांगने के कारण निकाले गए थे।

इंडियन रेअर अर्थ्स के सभी कारखानों (कुल तीन) में विभिन्न धातुओं के सांद्रिकरण के दौरान कामगारों को उच्च-रेडियोधर्मिता के वातावरण में काम करना पड़ रहा है, जिससे कामगारों में विभिन्न बीमारियों तथा कैंसर होने की दर कई गुना बढ़ गई है। कामगारों के बच्चों में अनुवांशकीय दोष और शारीरिक तथा मानसिक विकलांगता की दर बढ़ गई है। इस कारण हज़ारों मज़दूरों और उनके परिवारों पर विकलांगता और मौत का ख़तरा बढ़ता जा रहा है। पर व्यवस्थापकों द्वारा इस उच्च-रेडियोधर्मिता के प्रभावों को गैर-ज़िम्मेदाराना ढंग से लगातार नकारा जाता रहा है।

पिछले चालीस वर्षों में पर्यावरण को भी इंडियन रेअर अर्थ्स के विभिन्न कारखानों ने भयानक क्षति पहुंचाई है। पिछले वर्ष

पाठक लिखते हैं

जब मैं आल्वी गया था तो मालूम हुआ कि वहां स्थित कारख़ाने से पेरियार नदी में लापरवाही से भंडारित प्लुटोनियम के मिल जाने पर पूरे के पूरे केरल में पानी, मछली और फ़सलों द्वारा इस अति-रेडियोधर्मी पदार्थ के पहुंच जाने का डर व्यक्त किया जा रहा है, जिससे पूरे केरल प्रांत में कैंसर और अनुवांशकीय विकलांगता की बाढ़ आने की संभावना होगी।

पर्यावरण और सामाजिक दायित्व के इन बिंदुओं पर चकमक का संपादक मंडल शायद अनभिज्ञ नहीं रहा होगा। हक़ीक़त को जानते हुए भी यह विज्ञापन दिया गया है तो सामाजिक दायित्व के तहत चकमक जैसी पत्रिका से गैर-ज़िम्मेदाराना व्यवहार की आशा नहीं की जाती। आशा है भविष्य में इस प्रकार की भूलें नहीं होंगी।

☐ **डॉ. राजीव लोचन शर्मा,**
ई-4/89, अरेरा कॉलोनी, भोपाल

चकमक के अप्रैल, 90 के अंक में इंडियन रेअर अर्थ्स लिमिटेड का विज्ञापन देखकर मैं असमंजस में पड़ गया। समझ में नहीं आया कि आपने जानकारी की कमी की वजह से इस तरह का विज्ञापन स्वीकार कर लिया या विज्ञापन की चाह से सामाजिक उत्तरदायित्त्व की भावना को ताक पर रख दिया है।

केरल के अलवर स्थित इंडियन रेअर अर्थ्स के रेडियो-धर्मी पदार्थों के उत्पादन के कारखाने के आतंक की चर्चा पिछले कई सालों से अख़बारों में होती रही है। कारख़ाने में सुरक्षा नियमों का सरासर उल्लघंन करते हुए जिस तरीके से कामगारों और आसपास बसी जनता की जान और सेहत से खिलवाड़ किया जा रहा है, उसकी विस्तृत रपट वितरित की जा चुकी है। रेडियो-धर्मी पदार्थों की वजह से कामगारों और दूसरे लोगों की शारीरिक पीड़ाओं, लाइलाज़ आनुवंशिक रोगों से ग्रस्त बच्चों व मौत के साए में जी रहे हज़ारों लोगों की व्यथाकथा वीडियो फ़िल्म के जरिए सिर्फ़ केरल में ही नहीं भारत भर में दिखाई जा चुकी है। अपने कारनामों का पर्दाफाश होते देख इंडियन रेअर अर्थ्स लिमिटेड जोर-शोर से अपनी छवि बनाने की कोशिश कर रही है। चकमक में विज्ञापन छापकर आपने इस हत्यारी कंपनी की इस कोशिश में साथ दिया है।

संपादक मंडल ने चकमक में विज्ञापनों के लिए कोई नीति ज़रूर बनाई होगी। कृपया यह बताएं कि इंडियन रेअर अर्थ्स का विज्ञापन इस नीति के तहत कैसे आता है?

☐ **सत्यू षड़ंगी, भोपाल**

अंतर्राष्ट्रीय चित्रकला प्रतियोगिता

जापान की एक संस्था हर दूसरे वर्ष एक चित्रकला प्रतियोगिता का आयोजन करती है। इसमें भारत सहित तमाम अन्य देशों के बच्चे भी भाग लेते हैं। चुने हुए चित्रों की प्रदर्शनी के अलावा विभिन्न पुरस्कार भी दिए जाते हैं। कुछ पुरस्कृत चित्रकारों को 15 दिन की जापान यात्रा के लिए भी निमंत्रित किया जाता है।

भारत में इस प्रतियोगिता के लिए प्रवेशपत्र देने तथा चित्र एकत्रित करने के लिए इंडो-जॅपनीज़ एसोसियेशन, पुणे को अधिकृत किया गया है।

प्रवेश पत्र तथा अन्य विस्तृत जानकारी के लिए इस पते पर संपर्क करो—
कार्यवाह
इंडो-जॅपनीज़ एसोसियेशन
381 क, शनिवार पेठ, पुणे-411 030.

प्रतियोगिता में भाग लेने वाले की आयु 30 सितंबर, 1990 को चार वर्ष से कम या पंद्रह वर्ष से अधिक नहीं होनी चाहिए।

चित्र भेजने की अंतिम तिथि, 15 अगस्त, 1990 है।

ग़रीबी हटती नहीं है...

ग़रीबी हटाओ सभी कहते हैं
मगर ये ग़रीबी हटती नहीं है

देश का शासन बजाता है सीटी
मगर गाड़ी टेशन से छुटती नहीं है

गल्ली से दिल्ली तक, मंत्री से कुल्ली तक
ग़रीबों के हक़ में लगाते हैं नारे
ग़रीबों की किस्मत सोई है ये कैसे
नगाड़ा बजाने से उठती नहीं है
ग़रीबी हटाओ...

देश को लगी है भारी ये बीमारी
नाम है जिसका रिश्वतखोरी
रिश्वतखोरी हटेगी ये कैसे
पड़ी है ये आदत छुटती नहीं है
ग़रीबी हटाओ...



सुनीता राय, पिपरिया

लेकर सहारा ग़रीबों के बल का
मंत्री बन गया है चपरासी कल का
मंत्री जब बना तो हो गया बेईमान
बेईमानों की संख्या घटती नहीं है
ग़रीबी हटाओ...

सभी पार्टियों के सभी नेताओं ने
राष्ट्र माताओं ने राष्ट्र पिताओं ने
ख्यालों की खिचड़ी पकाई है मिलकर
भूख ये ग़रीबों की मिटती नहीं है
ग़रीबी...

मजबूरों के मजबूर आंसुओं की सिंचाई
लेकर कवि ने कविता सजाई
लिखते हैं कुछ ये, बकते हैं कुछ ये
यही बात हमको पटती नहीं है
ग़रीबी...!

☐ विलास कांबले, नवमीं
जवाहर नवोदय विद्यालय, अमरावती



कीर्ति चौहान, चार वर्ष, टिमरनी



महावीर जैन, देहरिया साहू, देवास

चालाक बंदर



गजानन भाया

एक बगीचा था। उसमें बहुत सारे फलों के पेड़ थे। एक दिन कहीं से एक बंदर बगीचे में आ गया। वह पेड़ों में फल देखकर ख़ुशी से कूदने लगा। उसने कुछ फल तोड़कर खाए पर फल कच्चे थे। उसे अच्छे नहीं लगे। वे फल उसने नीचे फेंक दिए। फलों के गिरने की आहट सुनकर माली दौड़ा आया। उसने उसे भगाने की कोशिश की। पर बंदर एक डाल से दूसरी डाल पर कूदने लगा। माली को लगा कि बंदर मुझे चिढ़ा रहा है। तब वह डंडा लेकर बंदर को मारने दौड़ा, बंदर बहुत चालाक था। वह एक यूक्लिप्टस के पेड़ पर चढ़ गया। माली उसे मार न सका!

□ श्रुतिप्रिया, दिल्ली

आज भी याद है!

उन दिनों 'अप्रैल फूल' बनाने का माहौल ज़ोर-शोर पर था। इधर हमारी वार्षिक परीक्षा के पूर्व परीक्षा के पेपर चल रहे थे। मन चाह रहा था कि ऐसा अप्रैल फूल बनाएं कि सबको खूब याद रहे। मन पेपर को छोड़कर इसी उधेड़बुन में लगा रहा।

बाज़ार से चाकलेट खरीद लाए एवं काफ़ी कलर का हाथ से बना साबुन। सारी असली चाकलेट निकाल ली एवं चौकोर साबुन की चाकलेट काटकर रेपर में रख दी। रात देर तक यही अभ्यास हुआ।

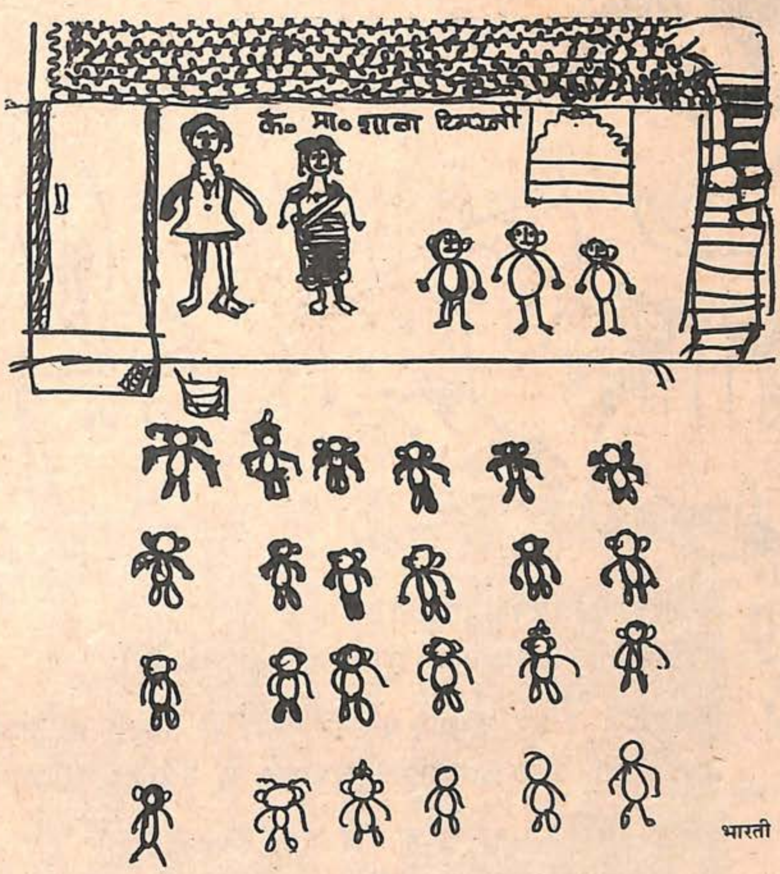
स्कूल पहुंचकर सबको चाकलेट दी और यह कहा कि जैसे ही पेपर शुरू होने का घंटा लगेगा, हम सब एक साथ चाकलेट का मजा लेते हुए पेपर शुरू कर देंगे। सब सहेलियों ने बात मानली। मन मेरा भी धड़क रहा था। मज़ा भी आया, मुस्कराहट मुंह पर आ जाती थी। जैसे ही घंटा लगा चाकलेट्स खुलने की रेपर्स की आवाज़ आई। दूसरे ही क्षण थू-थू करके सब खड़ी हो गईं। परीक्षकगण नाराज़ होकर बैठाने लगे, पहले तो मैं बहुत हंसी, बाद में भयभीत हो गई। पेपर तीन मिनट लेट शुरू हुआ।

मैंने ही वह चाकलेट बनाई, यह ज्ञात होने पर मुझे समझाया गया कि ऐसा नहीं बनाना चाहिए। इससे मुंह में छाले आ सकते हैं, साथ ही और कोई हानि भी हो सकती है।

जब भी एक अप्रैल आता है, वो चाकलेट ढेर याद आकर मुस्कराहट व अफसोस दोनों साथ-साथ आ जाते हैं।

□ निहारिका जोशी, दसवीं कुक्षी, धार

निडर बनो



भारती चौहान, चौथी, टिमरनी

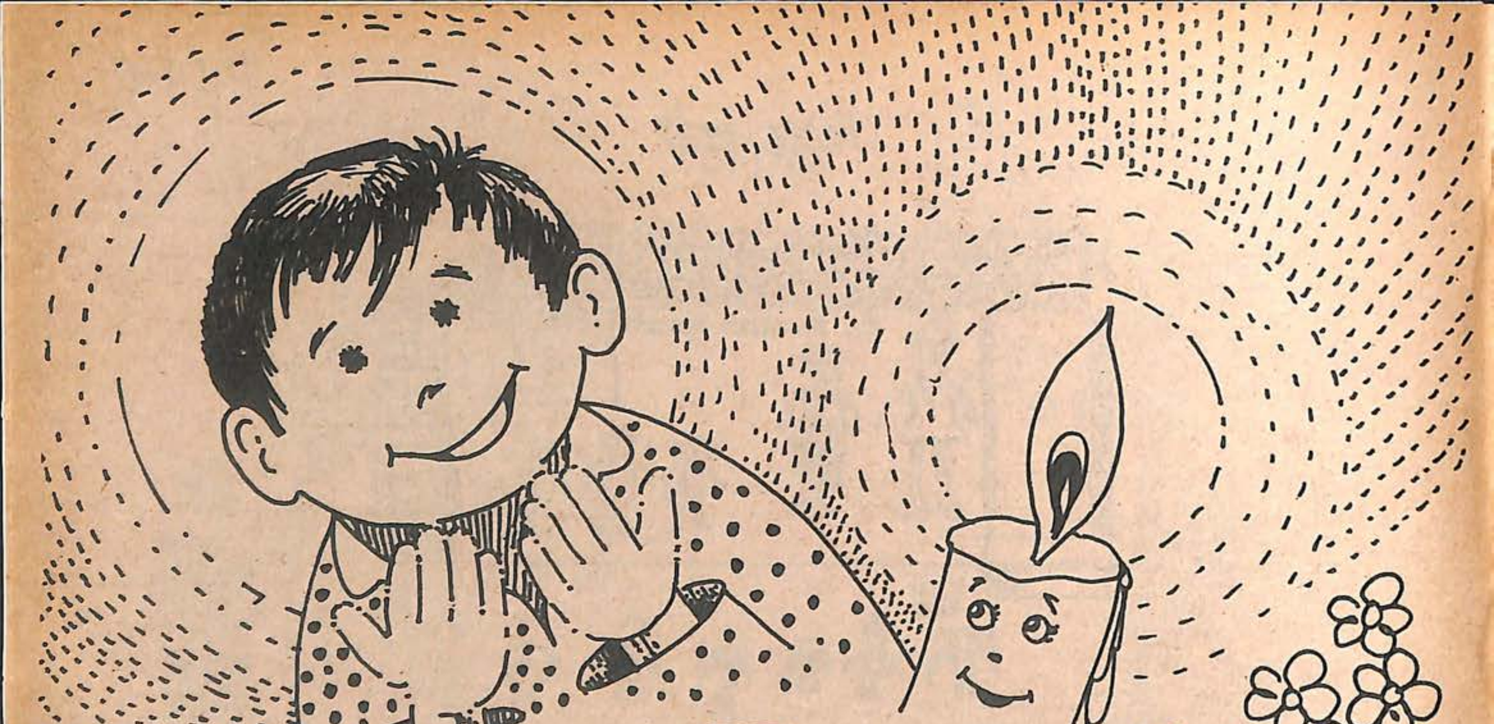
एक दिन मैं और मेरा दोस्त दोनों स्कूल जा रहे थे। तो रास्ते में एक कुत्ता हमारे पीछे लग गया। उसने हमें काटने की कोशिश की तो मेरा दोस्त रोने लगा और भाग गया। मैंने उस कुत्ते को बहुत मारा और भगा दिया।

फिर मेरा दोस्त मेरे पास आया तो मैंने उससे कहा कि अरे यार तू तो डर गया। हमें कभी डरना नहीं चाहिए। मेरी मम्मी मुझसे कहती है कि हमें हमेशा निडर बनकर रहना चाहिए। कभी नहीं डरना चाहिए। इस प्रकार मैंने मेरे दोस्त को समझाया और फिर हम स्कूल गए।

जब हम स्कूल गए तो वहां भी टीचर निडर बनकर रहने का ही पाठ पढ़ा रही थीं। मैंने मेरे दोस्त से कहा कि देख टीचर भी वही पाठ पढ़ा रही हैं। फिर छुट्टी हुई तो दोनों घर आए और फिर हम शाम को पार्क में घूमने गए, तो वहां हमें एक शेर मिला। मैंने मेरे दोस्त से कहा कि देख, प्रवीण शेर हमारी तरफ आ रहा है। मैंने उससे कहा कि डरना मत। और मैंने बड़ी-बड़ी लकड़ियां लीं और हम वहीं पर खड़े हो गए। जैसे ही शेर हमारी ओर आया हमने उसे मारना शुरू कर दिया और वह वहीं मर गया।

और हम ख़ुशी-ख़ुशी घर आ गए!

☐ महेश परसाई, नवमीं, खजूरी पंथ, मंदसौर



दुआ

लब पे आती है दुआ बन के तमन्ना मेरी
ज़िन्दगी शम्मा की सूरत हो ख़ुदाया मेरी

दूर दुनिया का मिरे दम से अंधेरा हो जाये
हर जगह मेरे चमकने से उजाला हो जाये

हो मिरे दम से यूं ही मेरे वतन की ज़ीनत
जिस तरह फूल से होती है चमन की ज़ीनत

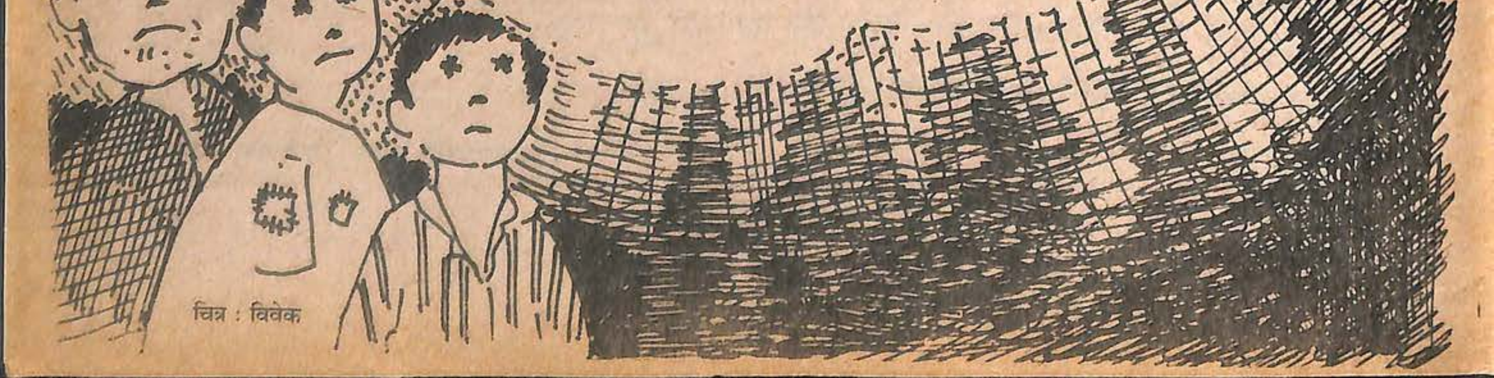
ज़िन्दगी हो मिरी परवाने की सूरत या-रब
इल्म की शम्मा से हो मुझको मोहब्बत या-रब

हो मिरा काम ग़रीबों की हिमायत करना
दर्दमन्दों से ज़इफ़ों से मोहब्बत करना

मेरे अल्लाह! बुराई से बचाना मुझको
नेक जो राह हो, उस रह पे चलाना मुझको

☐ इक़बाल

इसमें आए कुछ शब्दों के अर्थ इस तरह हैं - लब (होंठ) तमन्ना (इच्छा), शम्मा (दीपक), खुदाया (भगवान), ज़ीनत (सुंदरता), रब (भगवान). इल्म (शिक्षा), ज़इफों (बूढ़ों)।



चित्र : विवेक

राजा का दरवाज़ा

एक था राजा। उसने चाहा कि उसके महल में एक ऐसा दरवाज़ा हो, जिससे सिर्फ वो ही घुस पाए, कोई और नहीं। उसने अपने मंत्री से कहा, "मुझे एक ऐसा दरवाज़ा बनाकर दो जो मेरी ही शक्ल देखने पर खुले। ताकि उससे सिर्फ़ मैं ही घुस पाऊं, कोई और नहीं।"

मंत्री ने एक ऐसा ही दरवाज़ा बनाया। तब राजा ने सबको बुलाकर कहा, "है कोई जो घुस सकता है इस दरवाज़े से?"

एक आदमी आया। उसके हाथ में राजा की तस्वीर थी। तस्वीर में राजा की शक्ल देखकर दरवाज़ा खुल गया। राजा गुस्से में बाल खींचता रह गया।

राजा ने मंत्री से कहा, "मुझे एक ऐसा दरवाज़ा बनाकर दो जो सिर्फ़ मेरी ही आवाज़ से खुले।"

मंत्री ने ऐसा दरवाज़ा बनाया। राजा ने फिर सबको बुलाकर पूछा, "है कोई जो घुस सकता है इस दरवाज़े से?"



वही आदमी आया। उसने राजा को बहुत पानी ठंडा पानी पिलाया। फिर कहा, "अगर मैं इस दरवाज़े से नहीं घुस सकता तो राजा भी नहीं घुस सकता है।"

ठंडे पानी से राजा का गला ख़राब हो गया। उसकी आवाज़ ही नहीं निकली। राजा भी दरवाज़े से अंदर नहीं जा पाया। वो गुस्से से कूदता रह गया।



राजा ने मंत्री से कहा, "मुझे एक ऐसा दरवाज़ा बनाकर दो जो सिर्फ़ मेरे ही शरीर की गंध से खुले।"

लेकिन इस बार वही आदमी आया और राजा के पहने हुए कुछ कपड़े हाथ में उठाकर दरवाज़े के पास लाया तो दरवाज़ा खुल गया।

राजा ने ऐसा दरवाज़ा बनवाया जो सिर्फ़ उसके जूतों की आहट से ही खुले। लेकिन उस आदमी ने ज़मीन पर कालीन बिछा दिया, जिससे जूतों की आहट ही नहीं हुई।

फिर? फिर आगे क्या हुआ? उन दोनों का मुक़ाबला न जाने कब तक चलता रहा। मुझे तो यहीं तक की घटनाओं का पता है। आगे के बारे में तो अब तुम्हें ही सोचकर बताना होगा। तो बताओ फिर आगे क्या हुआ?

☐ सुबीर शुक्ला
चित्र : आशा शर्मा

कोयल



कोयल को तो तुम खूब अच्छी तरह जानते हो। तुमने इसके बारे में कविताएं भी पढ़ी होंगी और कई बार उसकी आवाज़ की नकल भी की होगी। आज हम कोयल के बारे में कुछ ऐसी बातें बताएंगे जिन्हें पढ़कर तुम्हें आश्चर्य होगा। पहली बात तो यह है कि नर और मादा कोयल एक-दूसरे से बिलकुल भिन्न दिखाई पड़ते हैं। चित्र में चमकीले काले रंग का जो पक्षी दिखाई पड़ रहा है वह नर कोयल है। इसकी चोंच पीली और आंखें लाल होती हैं। मादा कोयल भूरे रंग की होती है और उस पर अनगिनत सफ़ेद धब्बे होते हैं। जिसे तुम काली कोयल कहते हो वह वास्तव में श्रीमती कोयल नहीं, कोयल महाशय होते हैं।

शायद तुम्हें यह जानकर और भी आश्चर्य होगा कि गर्मी के मौसम में दिन भर कुहूऽऽ कुहूऽऽ गाने वाला नर कोयल ही होता है। मादा कोयल तो बेचारी गा ही नहीं सकती। वह केवल किक्-किक् की आवाज़ करती है।

कोयल आमतौर पर घने पत्तेदार पेड़ों पर रहना पसंद करते हैं। और आसानी से दिखाई नहीं पड़ते। इनका मुख्य भोजन विभिन्न प्रकार के फल हैं, किंतु ये कीड़ों और इल्लियों को भी खा लेते हैं।

कोयल कभी खुद घोंसला नहीं बनाते। है न मज़ेदार बात! घोंसला नहीं बनाते तो अंडे कहां देते होंगे? बच्चों को कैसे पालते होंगे? यदि तुमने चकमक में (अप्रैल, 1989) कौए के बारे में पढ़ा होगा तो शायद तुम्हें याद होगा कि मादा कोयल अपने अंडे कौए के घोंसले में चुपके से देती है। कोयल का प्रजनन भी उन्हीं दिनों में, यानी गर्मियों में, होता है जब कौए का। नर कोयल केवल इन्हीं दिनों में गाता है। यही कारण है कि इसकी कूक गर्मी के दिनों में सुनाई पड़ती है, अन्य दिनों में नहीं।

नर कोयल कौए के घोंसले के पास जाता है और जैसे ही नर और मादा कौए उसे भगाने के लिए उसका पीछा करते हैं, मादा कोयल इस बीच अपने अंडे कौए के घोंसले में दे देती है। इन अंडों का रंग रूप कौए के अंडे के समान ही होता है और कौए इन्हें अपने अंडे समझ कर सेते हैं और इनसे निकलने वाले बच्चों के लिए भोजन जुटाते हैं।

जैसे-जैसे प्रजनन काल समाप्त होता जाता है, नर कोयल की गाने की ललक भी कम होती जाती है। बरसात और ठंड में इनकी आवाज़ बिलकुल सुनाई न पड़ने के कारण और घने पेड़ों में छुपे रहने की आदत के कारण ऐसा लगता है कि इन दिनों कोयल कहीं और चले जाते हैं, किंतु ऐसा नहीं है। ये प्रायः एक ही स्थान पर रहते हैं।

यदि इन दिनों तुम ध्यान से देखो तो कौओं के घोंसलों के आसपास मंडराते और उन्हें छकाने की कोशिश करते हुए कोयलों को तुम देख सकते हो। अगस्त-सितंबर में कोयल के बच्चों को भोजन खिलाते हुए कौए भी तुम्हें दिखाई पड़ेंगे। कोयल के बारे में तुमने यदि कुछ सुना हो या देखा हो तो चकमक को लिख भेजो!

हां एक बात और, कोयल को अंग्रेज़ी में भी कोयल ही कहते हैं।

□ अरविंद गुप्ते

(चित्र सौजन्य : बॉम्बे नेचुरल हिस्ट्री सोसायटी)



हिमालय

"दुनिया में हर जगह मानव ने पहाड़ों से प्रेरणा ली है! पैंतीस वर्ष तक मैं हिमालय में घूमा हूं और पहाड़ों पर चढ़ा हूं, और हर बार वही उत्साह मेरे मन में रहा है जैसा पहली बार था...!

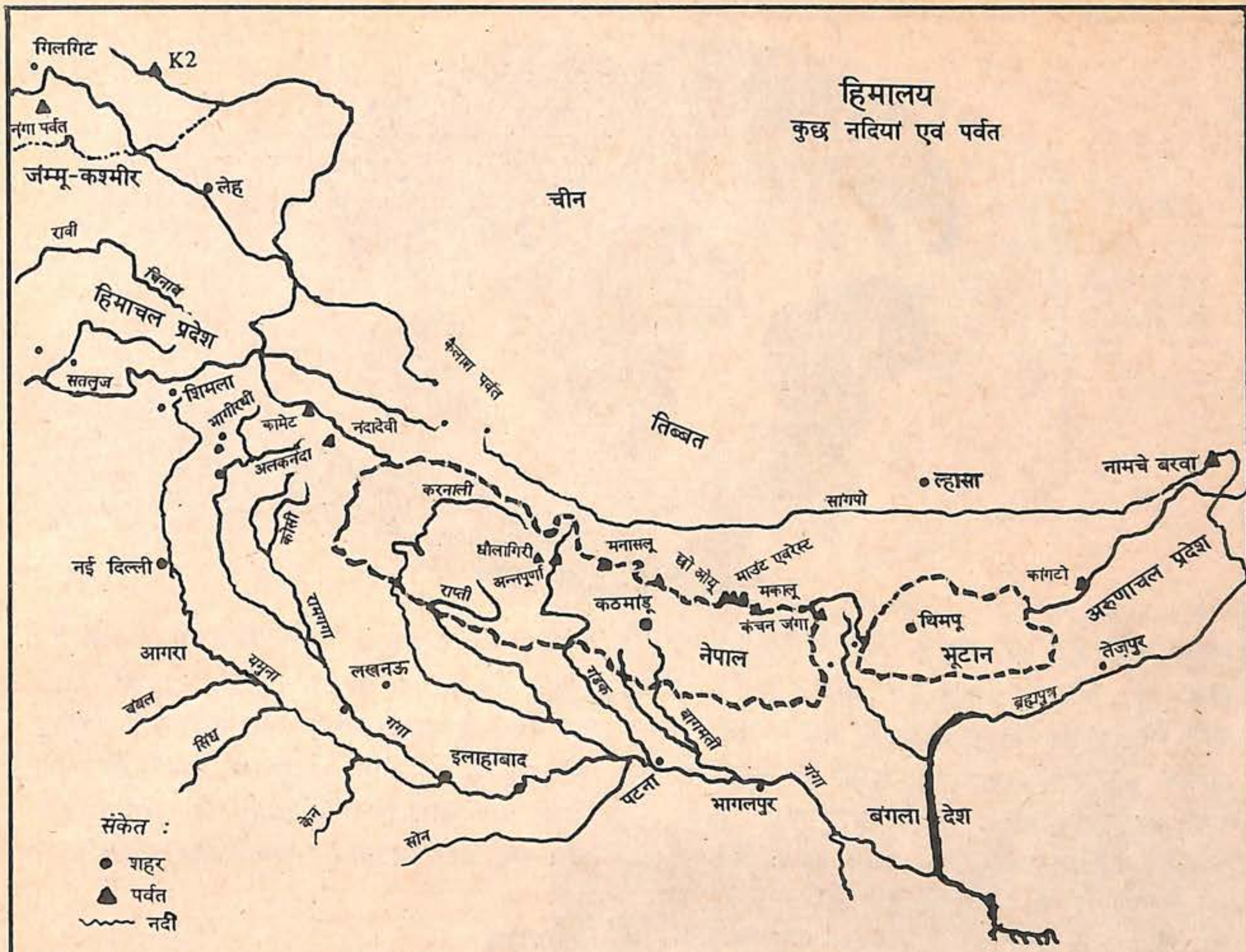
हिमालय में देखने और करने के लिए कितना कुछ है। वहां नदी-नाले बेहद साफ़ पानी से भरे हैं और इनसे प्यास बुझाना एक अजीब और बिरला अनुभव है। गांव के आसपास और पर्वतारोहियों के आने से गंदगी फैली रहती है। आखिर पर्यावरण को दूषित करने का एक मात्र स्रोत है—मानव! ख़ासकर फैक्ट्रियों से पनपा मानव! चूंकि हिमालय में इस मानव की इतनी भरमार नहीं है, इसलिए वहां पर अभी भी पहाड़ियां शान और सुंदरता से आकाश को छूती हैं। चोटियां ऊपर आकाश में इस तरह उठी रहती हैं कि यक़ीन नहीं होता। विशाल चट्टानें, असंतुलित बर्फ़ की मेढ़, चिपकी हुई बर्फ़ की ढाल... एक दूसरे पर लदी हुई... और ऊपर छुरी जैसी तेज़ धार। जैसे चोटी पर हमला करने वालों से रखवाली कर रही हों। और यह सब बदलता रहता है, जैसे प्रकृति का मूड बदलता रहता है। कहीं खौफ़नाक आंधी किसी चोटी से बर्फ़ उड़ाकर उसके ऊपर बादल जैसा आवरण बनाती है और कहीं सूर्यास्त बर्फ़ और चट्टान को लाल व सुनहरा बनाता है, और कहीं बर्फ़ के तुषारपात किसी पहाड़ को चकाचक सफ़ेद चादर से ढक लेते हैं।

पहाड़ पर चढ़ने वाला—पर्वतारोही—जब इन पहाड़ों की ओर नज़र उठाता है, उसका दिल एक अजीब सी ख़ुशी और टीस से भर उठता है! सब कुछ इतना सुंदर, लेकिन इतनी दूर, हासिल न होने वाला! काश उन चोटियों पर क़दम रख पाते... हालांकि वहां मौत इंतज़ार कर रही है!

आदमी पहाड़ पर क्यों चढ़ना चाहता है? प्रख्यात पर्वतारोही जॉर्ज मैलेरी जो खुद पहाड़ों पर ही अपनी जान गवां बैठे, का कहना था, 'क्योंकि वह है'! शायद इस बात के जवाब में कोई तर्क पेश करना बेकार है। यह एक भावना है, एक चाहत... चोटी बुला रही है... यह असंभव है असंभव, लोग कहते हैं... और इसीलिए कुछ लोग इसको संभव में बदलने में लग जाते हैं—एक पर्वतारोही की दिलेरी व हुनर पहाड़ के खतरों के विरुद्ध...!

और यह एक ऐसा मुक़ाबला है जिसमें ख़ुशी और डर दोनों गड्ड-मड्ड हैं—और एक गहरा आदर। इस संघर्ष का जो भी अंत है—कामयाबी या शिकस्त—वापस जाने की इच्छा बरकरार रहती है—हां! वापस फिर वहीं...!"

■ एडमंड हिलेरी



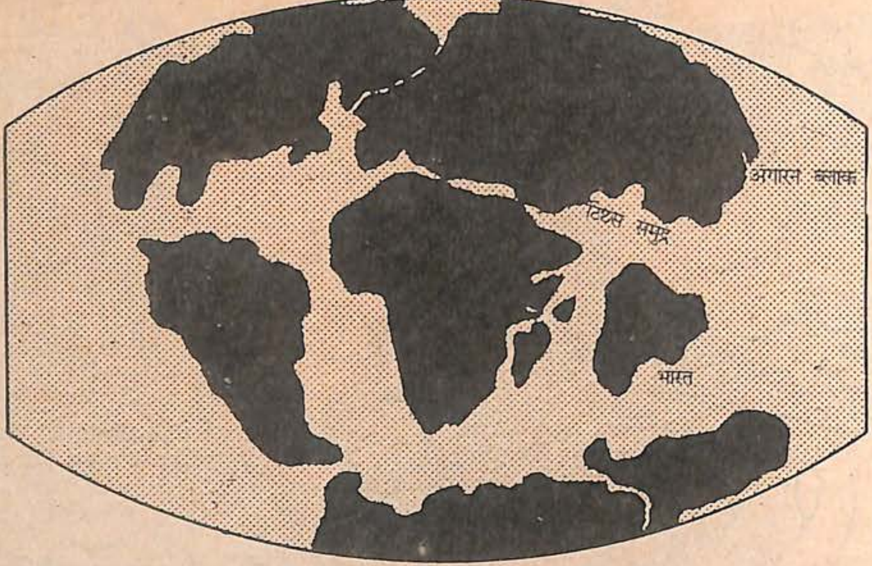
एडमंड हिलेरी वही हैं जो 1953 में टेंज़िंग नॉरगे के साथ विश्व की सबसे ऊंची चोटी माउंट एवरेस्ट पर पहुंचने वाले प्रथम मानव कहलाए। और तब से वे लगातार अपने देश न्यूज़ीलैंड से हिमालय में आते रहे हैं।

कुछ अंदाज़ है तुम्हें कि यह पर्वत श्रृंखला जिसे हम हिमालय के नाम से जानते हैं, कितनी लंबी है? यह फैली है पूर्व में ब्रह्मपुत्र नदी से पश्चिम में सिंधु नदी तक—2,700 किलोमीटर की लंबाई में। इस श्रृंखला में हज़ारों छोटे-बड़े पहाड़ हैं। लेकिन बड़े पहाड़ तो आश्चर्यजनक हैं—14 पहाड़ ऐसे हैं जो 8000 मीटर, यानी 26,000 फुट से भी ऊंचे हैं (इनकी ऊंचाई व नाम अलग से दिए गए हैं)। इनकी ऊंचाई का अंदाज़ तुम इस बात से भी लगा सकते हो कि इन पर जाने वाले पर्वतारोहियों को अपने साथ ऑक्सीजन की बोतलें साथ ले जानी पड़ती हैं, क्योंकि वहां पर हवा में ऑक्सीजन इतनी कम है कि सांस लेने में ख़ासी दिक्कत होती है।

कहां से आए हिमालय पर्वत

तुम्हें यह जानकर आश्चर्य होगा कि दूर-दूर तक फैली और आकाश को छूती यह हिमालय श्रृंखला हमेशा से पृथ्वी पर नहीं थी! और आश्चर्य की दूसरी बात यह है कि इसकी गगनचुंबी चोटियों पर ऐसे पत्थर मिलते हैं जो वास्तव में जीवाश्म हैं। इनके अध्ययन से यह पता चलता है कि 8000 मीटर से भी अधिक ऊंचाई पर पाए जाने वाले ये जीवाश्म कभी पानी या समुद्र में रहे होंगे। यानि जहां अब हिमालय है वहां कभी समुद्र था।

ऐसे कई अध्ययनों से भूवैज्ञानिक जो खाका खींच पाए हैं, वह कुछ इस तरह है; पृथ्वी लगभग साढ़े चार अरब साल पुरानी है, जबकि हिमालय पर्वत केवल साढ़े तीन करोड़ साल पहले अस्तित्व में आए। दुनिया के नक्शे में भारत आज जहां दिखता है, हमेशा वहां नहीं था। वह एक अन्य महाद्वीप, गोंडवानालैंड से टूटकर मध्य एशिया की ओर बढ़ा है। भारत व मध्य एशिया (जिसे अंगारन



ब्लॉक कहते हैं) की भूमि के बीच टिथ्स नाम का समुद्र था। ज्यों-ज्यों भारत इस अंगारन ब्लॉक के पास पहुंचा, यह समुद्र सिकुड़ता गया। दोनों के टकराने से इतना दबाव पैदा हुआ कि समुद्र तो ख़त्म हो गया, लेकिन ज़मीन उथल-पुथल होकर ऊपर को लगातार उभरती गई, जिसके कारण हिमालय पर्वत वजूद में आ गए। मज़ेदार बात यह है कि यह दबाव अभी भी मौजूद है, जिसके कारण हिमालय पर्वतों की ऊंचाई बढ़ती जा रही है। अनुमान है कि ये पर्वत साल में लगभग 7.5 से 10 सें.मी. तक बढ़ रहे हैं। मिसाल के तौर पर माउंट एवरेस्ट की ऊंचाई पिछले सौ साल में 8840 मीटर से 8848 मीटर हो गई है।

हिमालय में पाई जाने वाली नदियों से भी इस बात की पुष्टि होती है कि हिमालय पर्वत हमेशा से नहीं थे। कई नदियां ऐसी हैं जिनका स्रोत तो हिमालय पार तिब्बत में है, लेकिन वे घूमकर हिमालय को बीच में से काटती हुई भारत के मैदानों में बहती हैं। इस तरह का बहाव हिमालय के अलावा कहीं और देखने को नहीं मिलता है। ऐसा समझा जाता है कि ये सारी नदियां हिमालय पर्वतों के उभरने से पहले भी तिब्बत से निकलती थीं और जब हिमालय उभरने लगा तो इन नदियों ने पर्वतों में गहरी घाटियां बनाईं। उदाहरण के लिए नेपाल की सभी नदियां, पूर्व में अरुण, मध्य में त्रिसूली व काली गंडकी तथा पश्चिम में करनाली ने हिमालय के बीचों बीच गहरी खाईयां व घाटियां बनाई है। कहीं-कहीं पर खाईयों की गहराई 4 से 5 हज़ार मीटर तक है। काली गंडकी नदी केवल 1500 मीटर की ऊंचाई पर बहती है लेकिन दूसरी ओर सिर्फ़ 6 किलोमीटर की दूरी पर धौलगिरी का शिखर 8167 मीटर की ऊंचाई पर चमकता है। तिब्बत और हिंदुस्तान के बीच यही घाटियां सदियों से आवागमन का द्वार रही हैं।

जलवायु

ऊंचे पर्वत व अन्य कारणों से हिमालय की जलवायु भी एक अनोखापन लिए है। विशाल क्षेत्र में फैली यह पर्वत श्रृंखला न केवल स्थानीय मौसम को प्रभावित करती है बल्कि पूरी पृथ्वी के मौसम पर असर डालती है।

दक्षिणी हिमालय यानी भारत की ओर वाले हिस्से का मौसम आर्द्रता से भरा है और चारों तरफ विभिन्न किस्मों की वनस्पति फैली हुई है। लेकिन उत्तर में यानि चीन की तरफ मौसम खुश्क है, सब कुछ बंजर और वीरान।

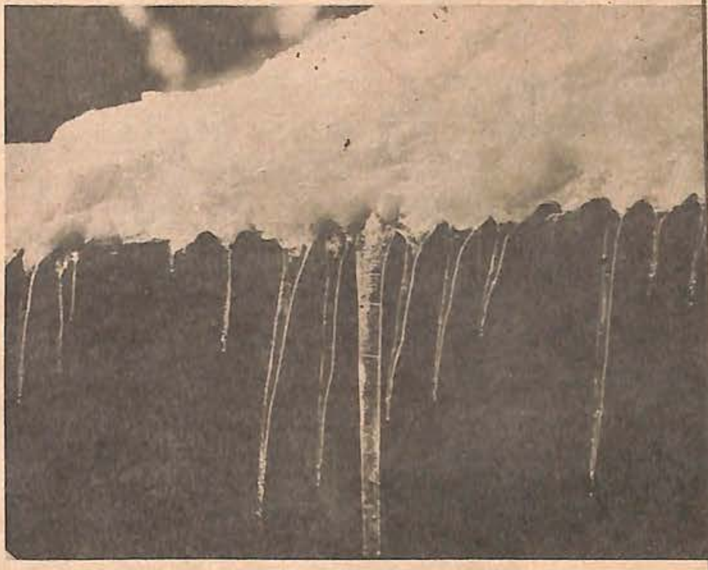
भारत के मैदानों से जब हिमालय की ओर बढ़ते हैं तो पहले बहुत गर्म इलाक़े मिलते हैं, फिर हवा में नमी वाले नायाब पेड़-पौधों से सजे इलाक़े और फिर घास के मैदान—जहां वायु एकदम साफ़ और सुहावनी होती है। ऐसा लगभग 4000 मीटर तक है। असली चढ़ाई इसके बाद शुरू होती है और फिर केवल बर्फ़ और चट्टानें ही मिलती हैं।

हिमालय श्रृंखला का जलवायु पर व्यापक रूप



एवेरेस्ट शिखर—चित्र में बाएं तरफ शिखर के सामने की दीवार नुप्तसे की है और दाईं ओर तिकोना शिखर ल्होटसे का है जिस पर उड़ती बर्फ़ का बादल बना हुआ है।

ऐसे जमती है कुल्फ़ी हिमालय के पहाड़ों पर!





अमरनाथ की गुफा के क़रीब बर्फ़ के एक पुल पर भेड़ें।

में प्रभाव मानसून से जुड़ा है। मध्य एशिया व हिंदमहासागर पर बहती हवाओं को काफी हद तक हिमालय ही प्रभावित करता है, जिसके कारण मानसून के बादल समुद्र से उठकर भारत में प्रवेश करते हैं और अच्छी बारिश हो जाती है

जीव-जंतु व वनस्पति

हिमालय क्षेत्र में पाए जाने वाले पौधों में जगह के हिसाब से भिन्नता पाई जाती है। जैसे पश्चिम की ओर पहाड़ियों के दामन में ऐसे पेड़-पौधे हैं जो आमतौर पर सूखे इलाकों में मिलते हैं। लेकिन मध्य व पूर्व में चौड़ी पत्ती वाले पेड़ मिलते हैं। लगभग 1200 मीटर की ऊंचाई तक विभिन्न पेड़-पौधों का एक जाल-सा बिछा हुआ है—जिसमें सबसे प्रमुख हैं साल के पेड़। कश्मीर की घाटी में सफ़ेदा, वीर व चिनार के पेड़ हर जगह बहुतायत मात्रा में पाए जाते हैं। 1200 मीटर से 2000 मीटर तक की ऊंचाई पर चीड़ व देवदार के जंगल मिलते हैं। 3000 मीटर से ऊपर चौड़ी पत्ती वाले चेस्टनट बलूत व कैंफर पेड़ मिलते हैं। इनके साथ-साथ सुंदर फूलों की झाड़ियां, रहोडोडेनड्रान भी इन ऊंचाईयों पर मिलती हैं। लगभग 5000 मीटर की ऊंचाई पर मिलने वाला पेड़ वह है जिसकी छाल से भोजपत्र हासिल होता है।

इन पेड़-पौधों के बीच अनेक प्रकार के जानवर, चिड़ियां व अन्य प्राणी रहते हैं। इनमें प्रमुख हैं; हाथी, एक सींग वाला गेंडा, बाघ, तेंदुआ, भूरे व काले भालू, जंगली सूअर, नीलगाय, चीतल, मुनचक, सांभर, गौर, गिबन बंदर, पानी में रहने वाला भैंसा, लंगूर। पक्षियों में काला बुज्जा, सारस, मिस्र का गिद्ध, टुईंया तोता आदि। इनके अलावा अनेक प्रकार के सांप, सरीसृप, घड़ियाल, मगरमच्छ व कछुए भी पाए जाते हैं। नदियों में अनेक प्रकार की मछलियां, जिनमें रोहू, कतला व महासीर प्रमुख हैं, पाई जाती हैं। और फिर किस्म-किस्म की तितलियां भी मंडराती रहती हैं।

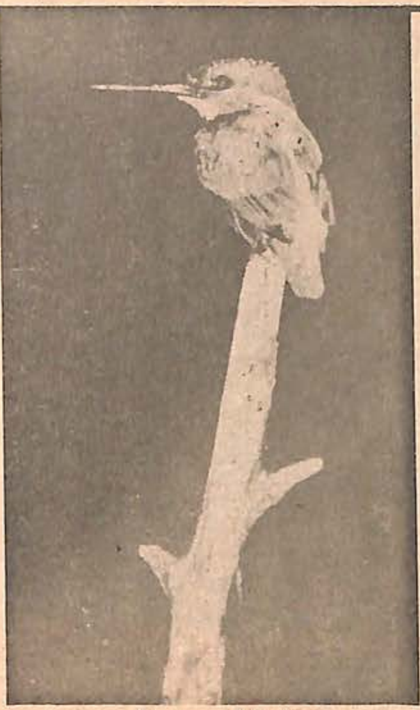
लोग और संस्कृति

मैदान में रहने वालों को ताज्जुब होता है कि इस प्रकार की पहाड़ी ज़मीन और मुश्किल रास्तों से भरे इलाकों में लोग कैसे रहते होंगे!

चीन और भारत के बीच अधिक मेल-मिलाप न होने का कारण कुछ हद तक यही पहाड़ हैं। श्रृंखला के दक्षिण, यानि भारत की ओर रहने वाले लोगों की नस्ल को इंडो-आर्यन कहा जाता है तथा उत्तर की ओर के वासियों को मंगोल। भाषा व धर्म में भी इसी प्रकार के अंतर हैं। विशाल पर्वतों के कारण ही हमारे काव्य में हिमालय को देश का पहरेदार चित्रित किया गया है। हालांकि ऊपर पश्चिम की ओर भी पहाड़ी श्रृंखलाएं हैं, लेकिन खैबर, गोमाल व बोलान दर्रों से गुजरकर हिंदुस्तान में प्रवेश करना ज़्यादा आसान रहा है। इतिहास के पन्ने पलटो



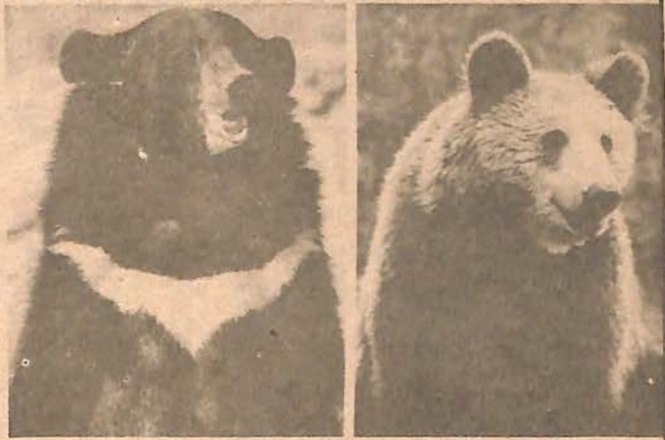
परंपरागत फेरन व सिर पर कपड़ा बांधे हुए महिला शाल बनाने के लिए ऊन कात रही है। गर्म कपड़ों का इस्तेमाल लगभग पूरे साल ही करना पड़ता है।



हिमालय क्षेत्र का नीलकंठ। वैसे देश भर में इस पक्षी की लगभग 20 जातियां पाई जाती हैं।



मादा "भौंकता" हिरण। यह नाम इसलिए पड़ा क्योंकि यह कुत्ते की तरह भौंकता है। नर के सिर पर दो सींग भी होते हैं। बाघ और तेंदुओं का मनपसंद शिकार है यह।



काले और भूरे भालू। दोनों ही हिमालय क्षेत्र में पाए जाते हैं। भूरा भालू मानवों से डरता है लेकिन काला भालू हमला करने से नहीं डरता। दोनों ही शहद और मधुमक्खियों के चटोरे हैं।



हिमालय क्षेत्र में पाया जाने वाला भरल का बछड़ा। इसको नीला भेड़ू से भी जाना जाता है। लद्दाख की वीरान पहाड़ियों पर इसके झुंड के झुंड देखने को मिलते हैं।



स्नो पिजन, या बर्फ़ीले कबूतर, हिमालय की एक घाटी में।



स्कूल जाते हुए बच्चे रास्ते में रुककर कहानी सुन रहे हैं। कहानी सुनाने वाला अपने आपको एक कांगड़ी से गर्म रखे हुए है। लगभग पूरे कश्मीर में सर्दी से बचाव का यही साधन है— –कांगड़ी, जिसमें कच्चे कोयले जलाए जाते हैं।

तो पता चलता है कि इरान से होते हुए इसी रास्ते से अनेक जाति के लोगों ने हमारे देश पर चढ़ाई की। इनमें से कुछ प्रमुख इस तरह हैं :

1. आर्य कबीले जो अपने रास्ते में पड़ने वाली हर बाधा को तहस-नहस करते हुए हमारे देश में घुसे। ऐसा माना जाता है कि उन्होंने प्राचीन शहरों जैसे मोहंजोदाड़ो व हड़प्पा को भी मिटा दिया।
2. ईसा से 327 साल पूर्व यूनान से सिकंदर।
3. इस्लाम धर्म को मानने वाले जो दसवीं शताब्दी के अंत से लगातार प्रवेश करते रहे।

ऐसे हमलों से ही हिमालय के दक्षिणी मैदानों, यानि भारत में इंडो-आर्यन लोगों ने अपनी जड़ें जमाईं, उधर दूर पश्चिम में तुर्क-इरानी, जैसे बलूच व पठानों ने। आहिस्ता-आहिस्ता आर्य जातियां बाकी आबादी में घुल मिल गईं और इन्होंने हिंदू धर्म अपना लिया। इसी के साथ-साथ बौद्ध धर्म का प्रचार हुआ। लेकिन दसवीं सदी के बाद मुस्लिम धर्म का प्रभाव तेज़ी से बढ़ता गया और दूसरी तरफ बौद्ध धर्म का प्रभाव कम होता गया।

मैदानी क्षेत्र से ऊपर की ओर पहाड़ी लोग रहते हैं, जिनकी आम भाषा पहाड़ी या नेपाली है। और ऊपर की ओर तिब्बती-बर्मा भाषाई लोग हैं जिनका धर्म लामा कहलाता है। ये लोग लद्दाख, गढ़वाल, डोटियाल, नेपाल, लेपचा, भूटान व तिब्बत में रहते हैं। ये सब मंगोल जाति के लोग हैं।

लद्दाख जैसे इलाके से प्राचीन काल में मर्द आमतौर पर व्यापार के लिए घर से काफी दिनों तक बाहर रहते थे। इस वजह से इस इलाक़े में एक औरत के कई पति होते थे—कुछ व्यापार आदि के लिए बाहर चले जाते और कुछ घर में रहते। इससे बिलकुल विपरीत पश्चिम की ओर गिलगिट जैसी जगह में इस्लाम के प्रभाव के कारण एक पुरुष की कई पत्नियां होती थीं। हिमाचल के लाहोल क्षेत्र में घर की मुखिया औरत ही होती थी!

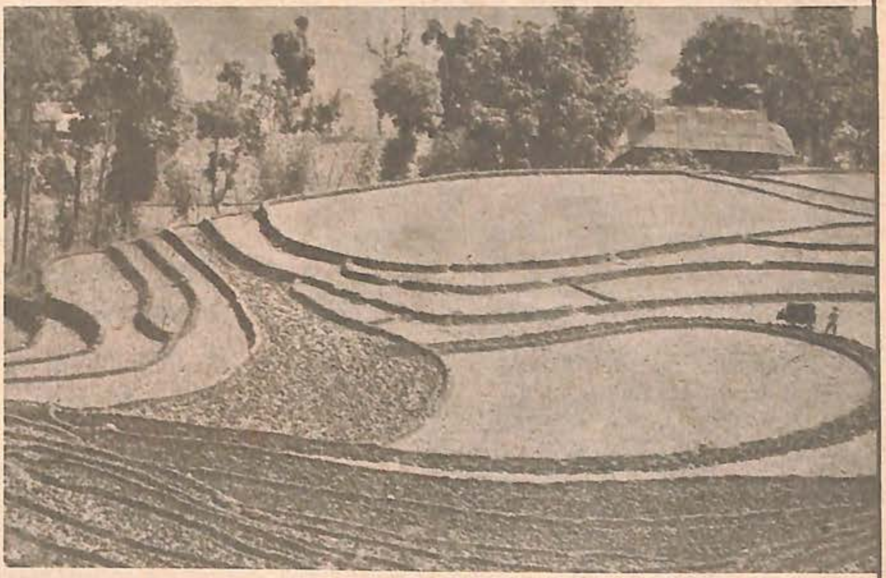
नदियां

'गोदी में खेलती हैं इसकी हज़ारों नदियां' प्रसिद्ध शायर इक़बाल की यह पंक्ति मात्र कविता नहीं है। सचमुच हिमालय में नदियां बिखरी हुई हैं। हिमालय के उत्तरी हिस्से में, जो तिब्बत में है, कैलाशपर्वत स्थित है। इसको जल स्रोत भी कहा जाता है। ऊंचाई में कैलाशपर्वत अन्य चोटियां जितना बड़ा नहीं है, समुद्र की सतह से यह 6192 मीटर ऊंचा है। कैलाशपर्वत के ठीक सामने मानसरोवर झील है। इसी से लगा हुआ एक और पहाड़ गुरला मनदारा कैलाश से भी ऊंचा (7728 मीटर) है।

इन पहाड़ों के आसपास ही एशिया, ख़ासकर दक्षिणी एशिया की तमाम प्रमुख नदियों के स्रोत हैं।



श्रीनगर में कई क़िस्म की रोटियां बिकती हैं दुकानों पर!



गंगटोक (सिक्किम) के पास एक खेत। हल चलाने के तरीके को ध्यान से देखो।



त्रिसूली घाटी में कोड़ा की कटाई। कोड़ा इस क्षेत्र का एक आम भोजन है।

एक नदी है सांगपो जो पूर्व की ओर हिमालय श्रृंखला के साथ-साथ बहती है, तिब्बत के बीचोंबीच। लेकिन अरुणाचल प्रदेश के ऊपर यह नदी नामचे बरवा पहाड़ के साथ घूमकर भारत में प्रवेश करती है, और यहां उसे ब्रह्मपुत्र के नाम से जाना जाता है। ब्रह्मपुत्र असम व बंगाल के मैदानों से होती हुई गंगा के मुहानों में जा मिलती है।

सांगपो के स्रोत से करीब पचास मील दूर दूसरी प्रमुख नदी सिंधु, नदी का स्रोत है। लेकिन आश्चर्य की बात यह है कि जबकि सांगपो पूर्व की ओर बहती है, सिंधु पश्चिम का रास्ता अपनाकर लद्दाख से होते हुए कश्मीर से गुजरती है और पाकिस्तान में से होकर अरब सागर में गिरती है।

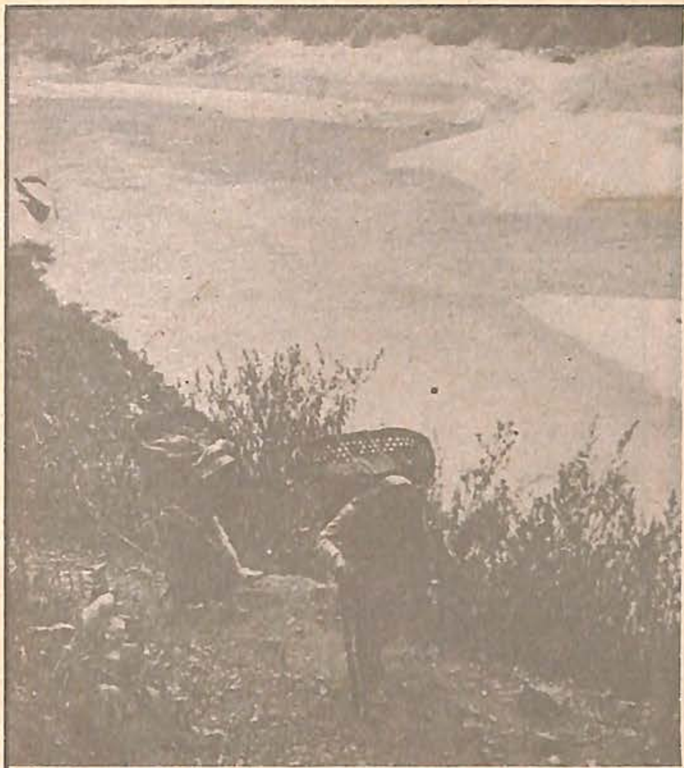
सतलुज नदी का स्रोत तो मानसरोवर झील ही है। पास ही स्थित राकस झील का पानी भी इसमें मिलता है। सतलुज कुछ दूरी तिब्बत में तय करके हिमाचल प्रदेश की हिमालय की पहाड़ियों में से रास्ता काटकर पंजाब में प्रवेश करती है और अंततः सिंधु नदी के साथ इसका संगम हो जाता है।

गंगा, जमुना के स्रोत गढ़वाल में हैं, हालांकि गंगा में करनाली नदी का पानी भी मिलता है जो कैलाश पर्वत के आसपास ही कहीं से फूटती है। गंगोत्री के ऊपर गौमुख से भागीरथी नदी शुरू होती है। जोशीमठ की तरफ से अलकनंदा नदी बहती है। इन दोनों नदियों का संगम देवप्रयाग में होता है और यहीं से गंगा नाम भी शुरू होता है। उत्तर-काशी की तरफ से यमनौत्री से यमुना शुरू होती है। यमुना काफ़ी दूर तक स्वतंत्र रूप से बहती हुई इलाहाबाद में गंगा में मिल जाती है। इन नदियों के आसपास ही अनेक तीर्थस्थान जैसे केदारनाथ, बद्रीनाथ, गंगोत्री, यमनोत्री, हरिद्वार, ऋषिकेश, बनारस आदि स्थित हैं। गंगा में काली गंडकी (नारायणी) नदी भी जा मिलती है जिसके किनारे प्रसिद्ध तीर्थस्थान मुक्तिनाथ है। गंगा में और भी नदियां मिलती हैं, जैसे बागमती जो नेपाल में कठमांडू से बहकर आती है। इसी पर प्रसिद्ध तीर्थस्थान पशुपतिनाथ स्थित है। इसी तरह सप्तकोसी भी गंगा में मिलती है। अरुण नदी पहले ही सप्तकोसी में मिल जाती है। भारत और नेपाल की सरहद पर मेछी नदी गंगा में मिलती है और फिर अंत में दो विशाल नदियां गंगा व ब्रह्मपुत्र मिलकर बंगाल की खाड़ी में प्रवेश करती हैं। खाड़ी के आसपास गंगा के कई मुख हो जाते हैं, जिससे एक बड़े क्षेत्र में मुहाने बन गए हैं।

नदियों के इस विवरण से एक मज़ेदार बात सामने आती है। आमतौर पर पहाड़ी नदियां आसपास के पानी से ही जीवित रहती हैं, लेकिन हिमालय में ऐसा नहीं है, क्योंकि सिंधु, सतलुज, ब्रह्मपुत्र व गंगा जैसी नदियां वास्तव में हिमालय के पार तिब्बत



हिमालय क्षेत्र में रहने वालों की शक्लें कुछ ऐसी हैं।



सप्तकोसी नदी के साथ का रास्ता। सामान उठाने का तरीका ध्यान से देखो।



बहना की पीठ पर भैया—नेपाल में पोखरा के पास।



गुज्जर कबीले की महिलाएं भेड़-बकरियों के साथ हर मौसम में यहां-वहां घूमती रहती हैं।



शाल पर कढ़ाई करता हुआ कारीगर। बहुत सुंदर कढ़ाई के लिए कश्मीर मशहूर है। चाय के शौक के साथ-साथ तंबाकू का हुक्का भी पहाड़ी लोगों का एक अभिन्न हिस्सा है।



कठमांडू (नेपाल) में मछिंद्रनाथ उत्सव की तैयारी में दिये जलाए जा रहे हैं।

से शुरू होकर इन पहाड़ों को काटती हुईं भारत के मैदानों में बहती हैं। इस भौगोलिक अजूबे का ठीक-ठीक कारण अभी तक अज्ञात है, लेकिन प्रचलित मत यही है कि ये नदियां हिमालय के बनने से पहले ही बहती आ रही हैं और हिमालय बनने के बाद हिमालय में से रास्ता काटकर बदस्तूर बह रही हैं।

हिमालय क्षेत्र में आवागमन

हिमालय नाम सुनते ही ऐसा लगता है जैसे वहां आना-जाना बिलकुल संभव ही नहीं है। लेकिन वास्तविकता यह है कि प्राचीन काल से ही हर प्रकार के लोग इन पहाड़ों के बीच दूर-दूर तक लगातार आते-जाते रहे हैं। इनमें शामिल हैं व्यापारी, तीर्थयात्री, सेनाएं तथा आसपास के रहवासी जो माल बेचने या खरीदने जाते हैं और जो महीनों पैदल चलने के आदी हैं।

पहाड़ों के बीच घाटियों और दर्रों का जटिल जाल फैला हुआ है। ये घाटी और दर्रे ही सदियों से आने-जाने के रास्ते रहे हैं। मिसाल के तौर पर पाकिस्तान में मुज़फराबाद से बाबूसर दर्रे से होते हुए (4500 मीटर) एक रास्ता गिलगिट, हुंज़ा पहुंच कर चीन में यारकंद तक जाता है। रास्ते में एक और दर्रा, जिसका नाम मिनटका है और जो 4709 मीटर की ऊंचाई पर है, पार करना पड़ता है।

कश्मीर में श्रीनगर से 3700 मीटर ऊंचे ज़ोजी ला से रास्ता लद्दाख में लेह को जाता है। अब तो यह पैदल रास्ता न होके एक पक्की सड़क है। यही रास्ता काराकोरम दर्रे से (5575 मीटर ऊंचा) होकर यारकंद को जाता है। काराकोरम मंगोल शब्द है जिसका अर्थ है 'भूरे पत्थर'। एक समय यहां चंगेज़ खां की राजधानी थी। इतिहास में इसका ज़िक्र बार-बार होता है।

इतना ही प्रसिद्ध कैलाश पर्वत का रास्ता है जिस पर तीर्थयात्री पांव घिसते रहे हैं। एक रास्ता शिमला से शिप्की दर्रे से होकर जाता है (4694 मीटर)। दूसरा गंगा के तट से होकर या तो माना से (5456 मीटर) या नीती से (5068 मीटर) होकर जाता है।

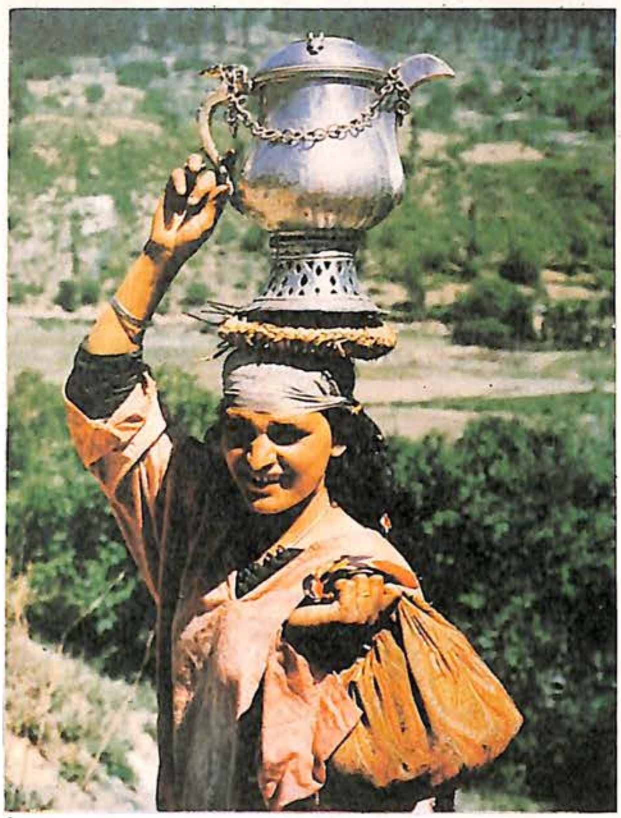
पूर्व में गंडकी का रास्ता भारत से सांगपो को जोड़ता है और मसतांग से हो के जाता है। थोड़ा और पूर्व में चीन जाने का रास्ता है जो कठमांडू को चीन में शिगत्से से जोड़ता है।

पूर्व में दार्जिलिंग व भूटान में ल्हासा को जोड़ने का रास्ता है जो कालिमपांग, गंगटोक से होते हुए चुंबी व ग्यानत्से घाटियों से जाता है।

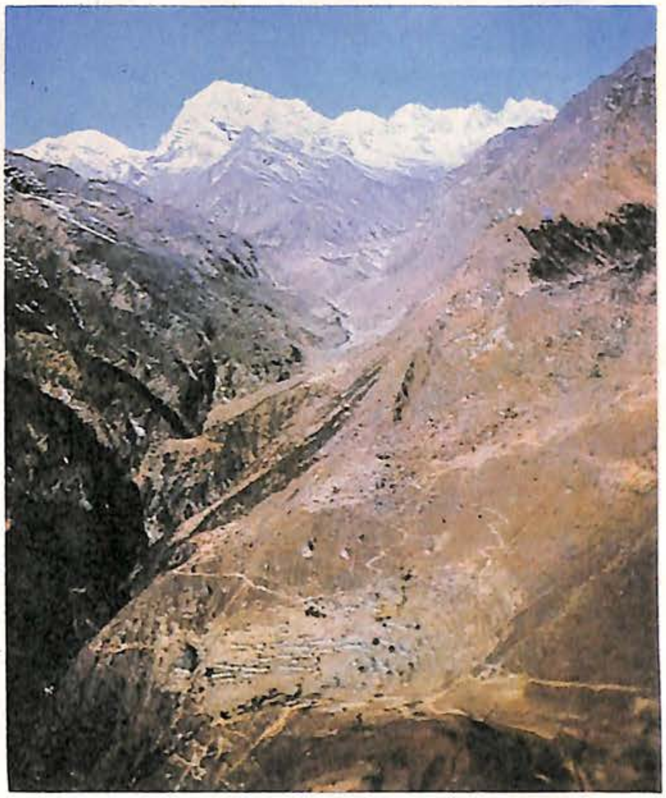
भारत की आज़ादी के बाद और 1962 के चीन युद्ध के पश्चात् हिमालय पर्वतों को काट-काटकर कई ऊंची सड़कें बनाई गई हैं, जो ख़ासकर सेना के इस्तेमाल के लिए हैं। लेकिन इन सड़कों ने दूर-दराज़ के शांत इलाकों में तबाही मचाई है, क्योंकि पहाड़ी सड़क काटने के लिए डायनामाइट का उपयोग किया जाता है, जिससे पहाड़ियों के पेड़, मिट्टी, पत्थर सब टूटकर बिखर जाते हैं।

सर्वे और सर्वेक्षण

हालांकि प्राचीनकाल से ही हिमालय के पहाड़ों को यात्रियों ने देखा-भाला था, व्यवस्थित सर्वेक्षण जिनमें पहाड़ों की ऊंचाइयां नापना व नक्शे बनाना शामिल था, लगभग 1850 से शुरू हुआ। यह बात 1863 में पता चली कि विश्व का सबसे ऊंचा पहाड़ माउंट



1

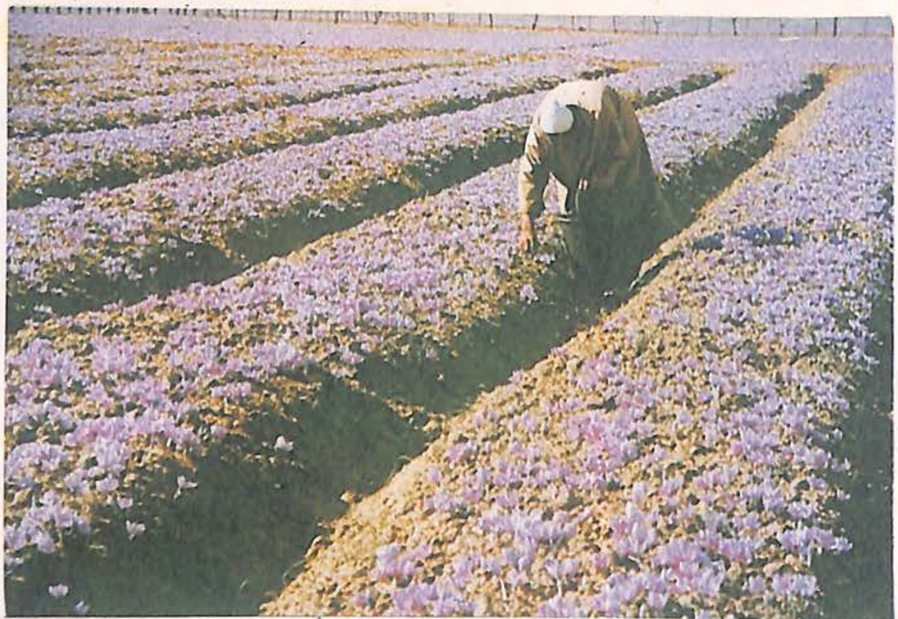


2



3

1. कश्मीरी लोग चाय के बहुत शौक़ीन हैं, सुबह का खाना व **सामावार** में गर्म चाय लिए एक महिला अपने पति के पास खेतों में जा रही है। सामावार के बीचोंबीच कोयले जलते हैं और चाय घंटों गर्म रहती है।
2. एवेरेस्ट के रास्ते में **नाम्चे बाज़ार,** शेरपाओं का प्रसिद्ध गांव।
3. घास की चप्पल, **पुलहोर,** बनाने वाला।



1



2

हिमालय कै

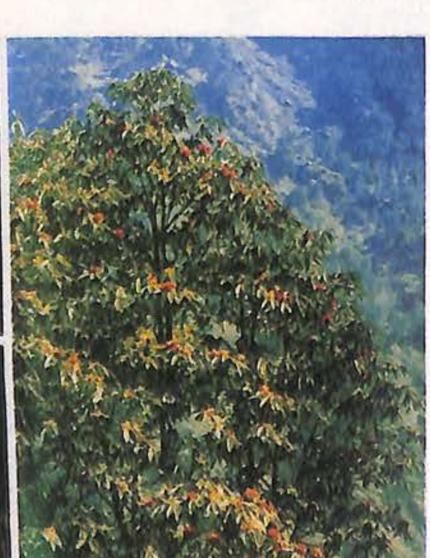


8





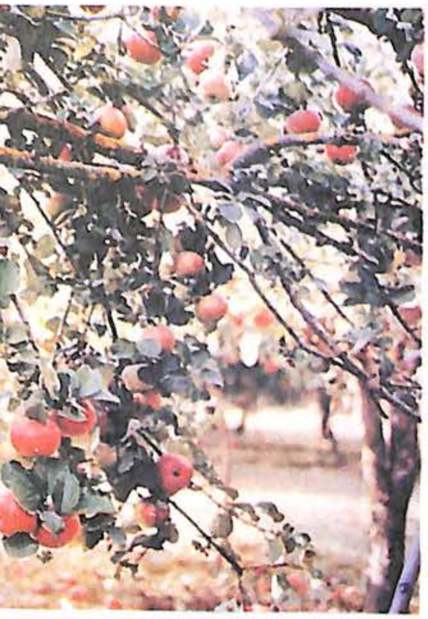
7





6

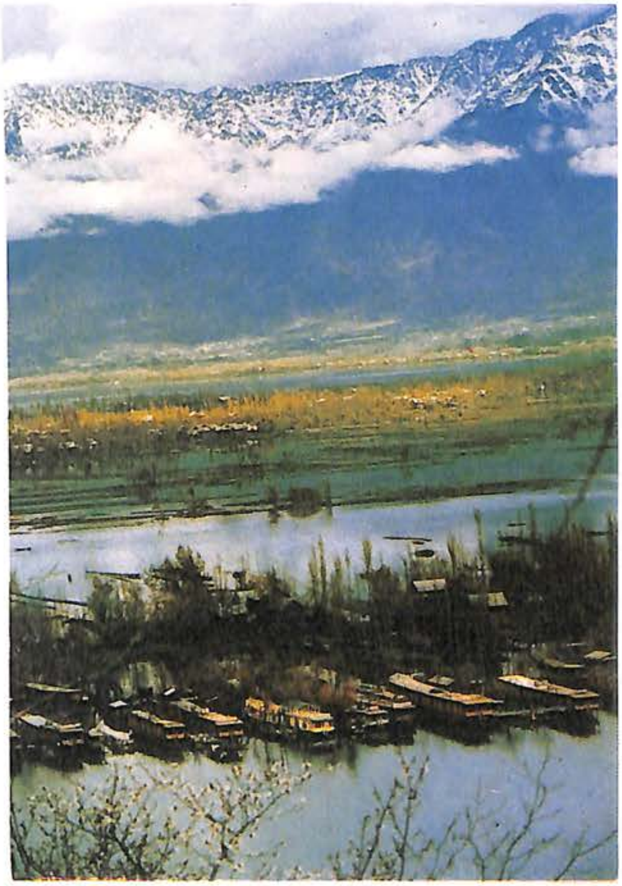
1.
2.
3. स
ग
4. श्र
मे
क
ज
मु
5. वि
6. प्र
क्ष
7. ब
क
रं
8. द





3

क दंग करने वाले अलग-अलग रंग



4

श्मीर की एक खासियत है **केसर**। इन नाजुक फूलों को सावधानी से काटकर
खाया जाता है और फिर बाज़ार में बहुत मंहगे दामों पर बेचा जाता है।
ब अक्टूबर के महीने में पेड़ों से तोड़े जाते हैं। अखरोट भी इसी महीने में मिलते हैं।
ीनगर (कश्मीर) में पामपूर के पास **बादाम** के वृक्षों की फुलवारी। सामने
रसों के पीले फूल दिख रहे हैं। जैसे-जैसे ऊंचाइयों पर बर्फ़ पिघलती है,
ड़रिए पहाड़ों की ओर निकल पड़ते हैं।
ीनगर (कश्मीर) में शंकराचार्य पहाड़ी से **डल** झील का एक दृश्य। इस झील
एक बड़ी आबादी रहती है। सामने बड़े-बड़े हाउसबोट हैं, जिनमें 5-6 आलीशान
मरे होते हैं और अधिकांश पर्यटक किराए पर लेते हैं। यह झील अब घटती
ा रही है। झील की सफाई करवाने के लिए झील में बसे लोगों को हटाना
श्किल हो रहा है। पीछे चोटियों पर जाड़े की बर्फ़ अभी भी बची है।
ितलियों की अनेक किस्में हिमालय में सब और मिलती हैं।
सिद्ध हिमालय **ब्लू पॉपी**। इसी किस्म की पीली व लाल पॉपी भी हिमालय
ेत्र में उगती हैं।
एं (ऊपर और नीचे) : **प्रिम्यूला** नाम के फूल लाल और पीले रंगों से घाटियों
ो रंगीन बनाते हैं। दाएं : **रहोडोडेनड्रान** के पेड़ व फूल पूरे हिमालय क्षेत्र में
गों की बहार लाते हैं।
ार्जिलिंग के प्रसिद्ध चाय के बागान।



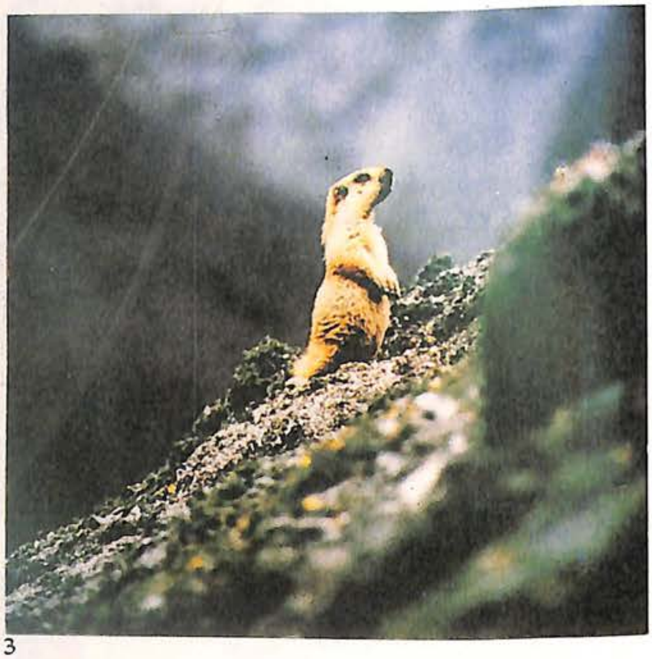
5



1



2



3



4

1. लेह (लद्दाख) का प्रमुख किला।
2. सिक्किम के पास बांस के जंगलों में यह **लाल पांडा** रहता है। दिन में अक्सर किसी पेड़ की ऊंची डाल पर लिपटकर सोता है।
3. पहाड़ों में पाया जाने वाला गिलहरी की जाति का जंतु, जिसे अंग्रेज़ी में **मॉरमेट** व हिंदी में **हिमभूष** कहते हैं। यह ज़मीन में छेद बनाकर रहता है। जब कोई ख़तरा महसूस होता है तो दो टांगों पर खड़ा होकर ज़ोर से आवाज़ करता है।
4. मनाली के पास अत्याधिक तेज़ी से बहने वाले नाले को पार करने के लिए बनाया गया पैदल पुल।

हिमालय की चोटियां

क्र. नाम	कहां	ऊंचाई मीटर	फीट
1. एवेरेस्ट (छोमोलुंगमा/ सागरमाथा)	नेपाल-तिब्बत	8848	29,028
2. K2	पाकिस्तान	8611	28,250
3. कंचनजंघा	नेपाल-भारत	8598	28,146
4. ल्होटसे	नेपाल-तिब्बत	8501	27,891
5. मकालू	नेपाल-तिब्बत	8475	27,790
6. धौलागिरी	नेपाल	8167	26,826
7. छो-ओयू	नेपाल-तिब्बत	8153	26,750
8. नंगा पर्वत	पाकिस्तान	8126	26,661
9. मनालसू	नेपाल	8125	26,658
10. अन्नपूर्णा	नेपाल	8091	26,502
11. गेशूरब्रम-1	पाकिस्तान	8068	26,470
12. ब्रोड़ पीक	पाकिस्तान	8047	26,402
13. गेशूरब्रम-2	पाकिस्तान	8035	26,363
14. गोसांईथांन (शीश पंगमा)	नेपाल-तिब्बत	8013	26,291

हिमालय की भारत में कुछ प्रमुख चोटियां

1. नंदा देवी	गढ़वाल	7817	25,647
2. नामचा बरवा	असम-तिब्बत	7756	25,447
3. कामेट	गढ़वाल	7756	25,447
4. जानू	सिक्किम-नेपाल	7710	25,296
5. नुन कुन	लद्दाख	7135	23,410

एवेरेस्ट है। इस पहाड़ को तिब्बती, छोमोलुंगमा व नेपाली सागरमाथा के नाम से जानते हैं। सर्वेक्षण दफ़्तर के राधानाथ सरकार ने 'पहाड़ नं. 15' के रूप में इसकी ऊंचाई एक विशेष विधि द्वारा ज्ञात की थी। सर्वेक्षण करने वाले छोमोलुंगमा या सागरमाथा दोनों नामों से अपरिचित थे, इसलिए उन्होंने पहाड़ नं. 15 का नाम सर्वेक्षण दफ़्तर के पूर्व संचालक जॉर्ज एवेरेस्ट के नाम पर रख दिया!

इन सर्वेक्षणों के दौरान कई मज़ेदार कहानियां उभरीं। जैसे एक अंग्रेज़ सर्वेक्षणकर्त्ता कुछ हिंदुस्तानी कुलियों के साथ एक छोटे पहाड़ पर चढ़ रहा था। इस पहाड़ पर पहुंचकर उसे दूर के एक 19,000 फुट ऊंचे पहाड़ की ऊंचाई ज्ञात करनी थी। लेकिन एक दिन चढ़ते-चढ़ते कुली थक गए और आराम के लिए रुक गए। अंग्रेज़ थोड़ा चकरा गया, क्योंकि यह कुली तो बहुत तेज़ी से पहाड़ पर चढ़ने वालों में से थे। उसने उन्हें डांटा, धमकाया। फिर किसी तरह वे उस छोटे पहाड़ के ऊपर पहुंच गए। आख़िरकार अंग्रेज़ ने सुस्ती का कारण पूछा, तो पता चला कि कुलियों का खाना ख़त्म हो गया था और वे भूखे थे। ख़ैर अंग्रेज़ ने अपना काम पूरा किया। अब इस पहाड़ को कोई नाम देना था, तो उसने झट उसे नाम दिया—ख़ालीपेट!

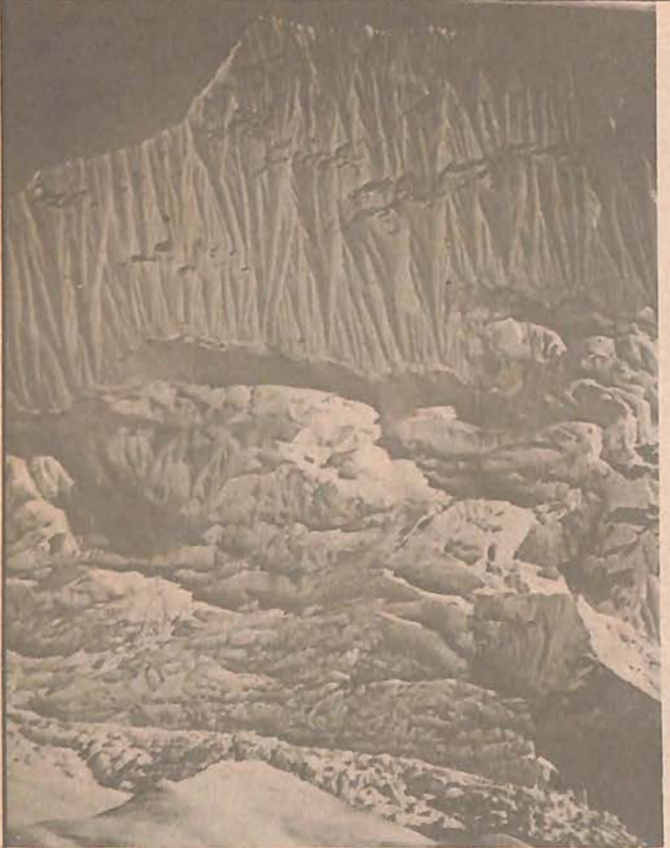
एक और मज़ेदार कहानी है। पहले यह नहीं मालूम था कि सांगपो व ब्रह्मपुत्र एक ही नदी के दो नाम हैं। लगता था कि अलग-अलग नदियां हैं। लेकिन सर्वेक्षणकर्त्ता इस बात से हैरान थे कि ब्रह्मपुत्र का स्रोत आख़िर कहां है। उन्होंने सोचा कहीं ऐसा तो नहीं है कि वास्तव में नदियां दो नहीं, वरन् एक ही हैं। इस बात को सिद्ध करने के लिए, उन्होंने तय किया कि एक पार्टी तिब्बत जाएगी और एक खास जगह पर सांगपो में कुछ लकड़ी के खंबे डालेगी जिन पर निशान लगे थे। फिर असम में ब्रह्मपुत्र नदी पर निगरानी की जाएगी, अगर ये खंबे वहां ब्रह्मपुत्र में पाए गए तो यह माना जाएगा कि दोनों एक ही नदी हैं।

यह ज़िम्मेदारी रामसिंह नाम के व्यक्ति को सौंपी गई। रामसिंह एक लामा को साथ लेकर तिब्बत की ओर निकला। लेकिन सांगपो पहुंचने के पहले ही लामा ने रामसिंह को एक संपन्न चीनी परिवार को दास के रूप में बेच दिया। रामसिंह बेचारा परेशान था कि अब वह क्या करे। उधर असम में दो-तीन साल तक लगातार निगरानी करने पर भी एक भी खंबा नज़र नहीं आया। पांच वर्ष बाद ब्रह्मपुत्र में खंबे बहते नज़र आए। अंततः यह सिद्ध हुआ कि ब्रह्मपुत्र तथा सांगपो वास्तव में एक ही नदी है। रामसिंह मौका पाकर चीनी परिवार के चंगुल से भाग निकला था और उसने वह काम किया जिसके लिए उसे भेजा गया था।

☐ **विनोद रायना**

इस लेख में आए चित्रों व अन्य सामग्री के लिए आभार :

1. **योशिकाज़ू शिराकावा** : हिमालय (1976)
2. **जेराल्ड क्यूबिट** : वाईल्ड इंडिया (1985)
3. **अशविन मेहता / मौरिस हेरज्यॉग** : हिमालय (1985)
4. **उपिन्दर खुलर** : कश्मीर (1987)
5. **फ्रांसिस कीनलीसाइड** : पीकस एंड पाओनियरस (1975)
6. **तोमोया आयोज़ावा** : ट्रेकिंग इन द हिमालयाज़ (1980)
7. **फिलिप मेसन** : अब्रोड ऑफ स्नो



चूखुंग ग्लेशियर। पहाड़ों में जहां-जहां घाटियां बर्फ़ से ढक जाती हैं और पूरे बारह महीने ढकी रहती हैं, उन्हें ग्लेशियर कहते हैं।



गंगोत्री में भागीरथी नदी का एक प्रपात। बर्फ़ पर बैठा आदमी योग की एक मुद्रा में। गंगोत्री एक बड़ा तीर्थ स्थान है।



एवेरेस्ट के पास खुम्बू ग्लेशियर का एक दृश्य।

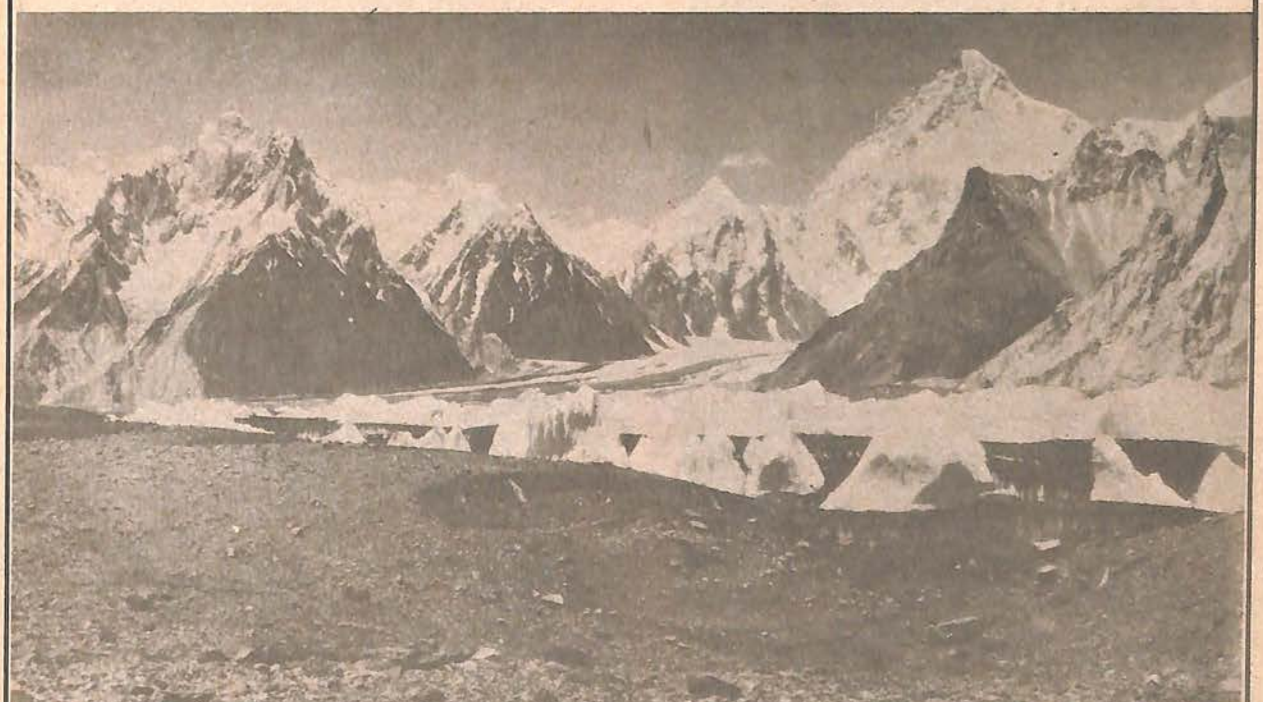


नेपाल में अमा दबलम नाम का यह सुंदर पर्वत 6,856 मीटर ऊंचा है।

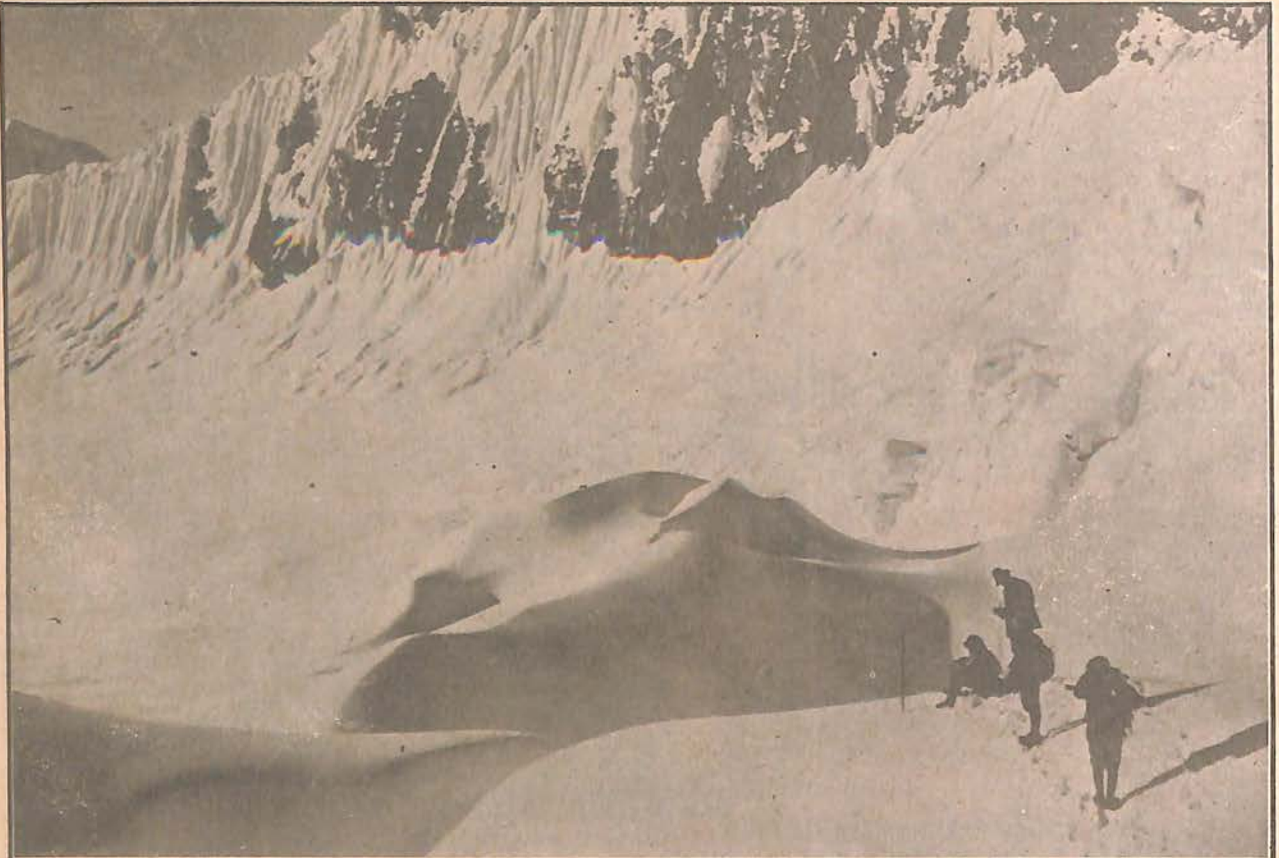


टॉम लांगस्टाफ की पार्टी ने 1907 में त्रिशूल की चोटी पर पहला मानव क़दम रखा। अगले बीस वर्षों तक इससे अधिक ऊंची चोटी पर मानव नहीं पहुंच पाया। चित्र में लांगस्टाफ बीच में हैं।

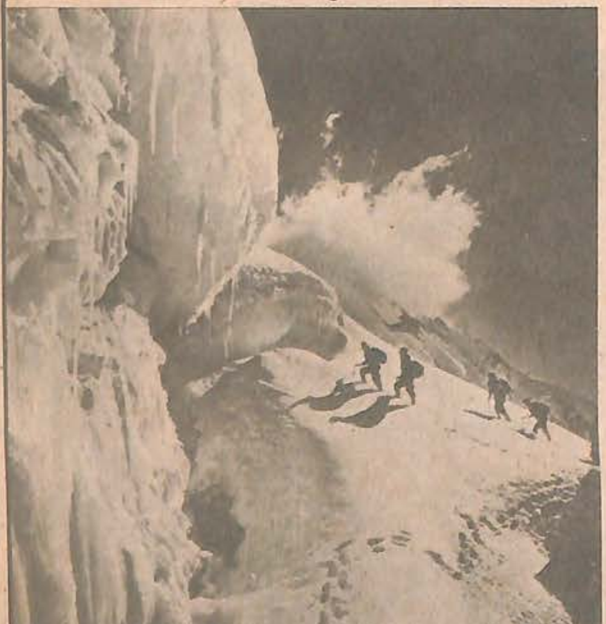
पर्वतारोहण



K2 पर्वत का एक चित्र। 1909 में सेला नामक व्यक्ति ने इसे खींचा।



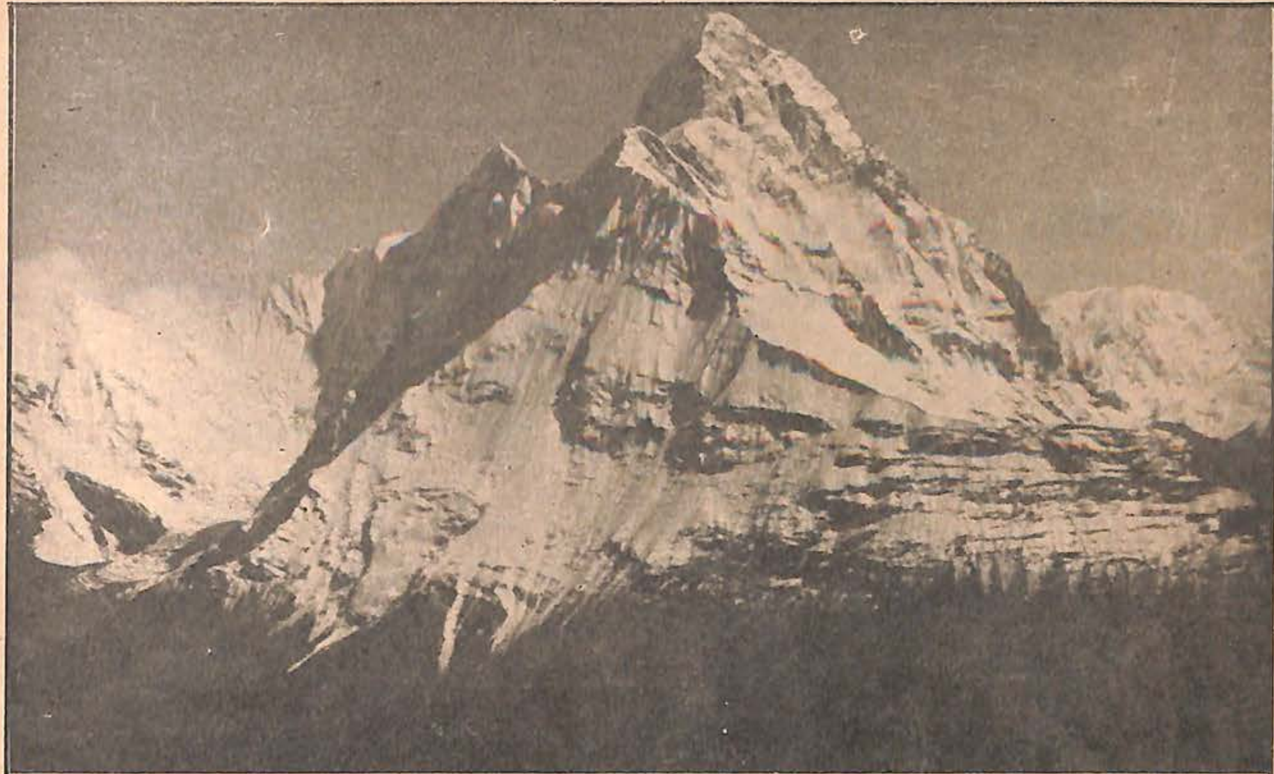
1921 में एवेरेस्ट पर 21,000 फुट की ऊंचाई पर मेलेरी व वोलेस्टान।



1934 में नंगा पर्वत पर चढ़ रहे पर्वतारोही। अभियान असफल रहा...!



.... शेरपा पसांग किक्रली ठंड से बुरी तरह ठिठुर गया।



नंदा देवी 1934 में, एरिक शिपटन के कैमरे से।



बर्फ़ से ढका माउंट एवेरेस्ट।



8000 मीटर (26,000 फुट) से ऊंची चोटी पर मानव पहली बार 1950 में पहुंचा। चोटी थी अन्नपूर्णा पर्वत। हरचॉग व लेकिनेल चोटी पर पहुंचे। चित्र में लेकिनेल (बीच में) उतरते समय। उतरने में उनका बुरा हाल हो गया।



1953 में एवेरेस्ट पर चढ़ने में कामयाबी मिली। बर्फ़ीले क्षेत्र में एक खाई के पास पार्टी के कुछ सदस्य।



टेंज़िंग व हिलेरी, जो एवेरेस्ट की चोटी पर पहुंचने वाले पहले दो मानव बने।



1963 में अमरीकी दल के मिटेकर व नवान गोम्बू एवेरेस्ट पर चढ़ने में कामयाब रहे।



जानू चोटी पर विजयी फ्रांसीसी दल के टिरे व वोगड़ी, 1962 में।



हिमालय पर्वतारोहियों के जांबाज़ साथी—शेरपा। शाम का खाना पकाते हुए!



हैजे से बचाव

चुन्नू मुन्नू आओ पास
क्यों हो चिंतित और उदास
क्या बतलाएं आलम चाचा
बता रहे थे घर में पापा

नई समस्या हो गई पैदा
फैल रहा है शहर में हैजा

आओ तुमको राह बताऊं
बचने की तरकीब सुझाऊं

सबसे पहले तुम सब जाओ
हैजे का टीका लगवाओ

खुली मिठाई, फल अंजीरें
सड़ी गली या बासी चीज़ें

कभी न खाना, और हो संभव
तो पानी पीना तुम उबालकर

ताज़ा शुद्ध गरम हो खाना
जहां गंदगी हो मत जाना

मक्खी अपनी दुश्मन बदतर
उससे रहना हरदम बचकर

इतना जतन अगर कर लोगे
तंदुरुस्ती से दामन भर लोगे

☐ अनवार आलम

चित्र : बी. सावरकर

सांप से सामना



माखन आम लड़कों जैसा ही था। जैसे कन्हैया, गणेश, भोलू थे बस उन्हीं जैसा ही था। उसमें उनसे कुछ अलग बात थी तो यही कि उसका नाम माखन था और बाक़ियों का कुछ और!

एक दिन की बात है, माखन अपने गांव के साथियों के साथ कुएं की मुंडेर पर बैठा चने फुटाने चबा रहा था कि इतने में सबने कुछ दूरी से आती सरसराहट सुनी। जैसा कि तुमने अंदाज़ा लगा लिया, वैसे ही उन सबने अंदाज़ा लगाया कि हो न हो यहां आसपास कहीं सांप है। सामने झुरमुट था। कुछ डर के मारे पीछे ही खड़े रहे, कुछ ये देखने के लिए कि वहां वाकई सांप है या कुछ और, थोड़ा आगे बढ़े। माखन भी आगे बढ़ने वालों में था।

उसने सांप और सांप के ज़हर के बारे में सुना तो बहुत था लेकिन उसे कभी डरने जैसी बात नहीं लगी थी। उसे समझ नहीं आता था कि आख़िर लोग सांप से इतना डरते क्यों हैं? ख़ैर... आख़िरकार उस झुरमुट में से एक काली रस्सी-सी आकृति रेंगते-रेंगते उनके सामने से गुजरने लगी। आगे के कुछ लड़कों ने मज़ा लेने के लिए एक-दो पत्थर सांप को मारे। लेकिन एक को छोड़कर बाक़ी सभी पत्थर सांप को लगे बिना इधर-उधर जा गिरे।

सांप को कुछ लगा। वह एक पल को ठिठका। फन उठाकर आसपास देखने लगा। उसकी नज़र लड़कों पर जा टिकी। माखन ग़ौर से यह सब देख रहा था। सच्ची बात तो यह है कि जो पत्थर सांप की पूंछ को लगकर निकला था वो माखन ने ही फेंका था। माखन के शरीर में सांप के बदले हुए हाव-भाव देखकर झुरझुरी सी उठ आई। उसने अपने साथियों से कहा, सांप को जाने दो। अब अपन इसको पत्थर नहीं मारते। अपने रास्ते जा रहा है जाने दो।

और वाकई सांप ने कुछ देर बाद अपना फन सिकोड़कर ज़मीन से लगाया और चुपचाप निकल गया। कुछ देर तक सब दम साधे सरसराहट की आवाज़ सुनते रहे!

□ राग तेलंग
चित्र : धनंजय



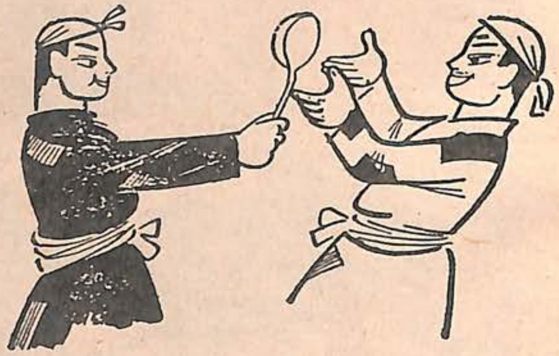
नन्हे गुदड़ीलाल के साहसिक कारनामे

शायद तुम जानते होगे कि करछियों का भी कुलनाम होता है। मेरा नाम क्वो है। जानते हो मेरा कुलनाम क्वो क्यों पड़ा? क्योंकि मुझे बनाने वाले लोहार का नाम भी क्वो था।

क्वो बड़ा हृष्टपुष्ट था। उसका चेहरा लाल था, कंधे चौड़े थे, सीना मज़बूत था और बाहें फ़ौलाद की तरह शक्तिशाली थीं। भारी-भरकम घन से वह लगातार कई हज़ार बार लोहा पीट सकता था। जब वह लोहा पीट रहा होता, तो पसीने की बूंदें उसके चेहरे से गरम-गरम लोहे पर लगातार गिरती रहतीं।

करछियां बनाने के अलावा वह कृषि-औजारों की मरम्मत भी करता था। ग़रीबों के कृषि-औजारों की मरम्मत वह मुफ़्त कर देता था। वह करछियां बेचकर अपना गुज़ारा चलाता था। उसकी करछियां बड़ी मज़बूत और अच्छी होती थीं। दूसरे गांवों के लोग भी उसके काम की सराहना करते थे। उसका उपनाम "करछी क्वो" पड़ गया था। लोग उसका आदर न सिर्फ़ एक अच्छा शिल्पी होने की वजह से करते थे बल्कि एक नेकदिल आदमी होने की वजह से भी करते थे।



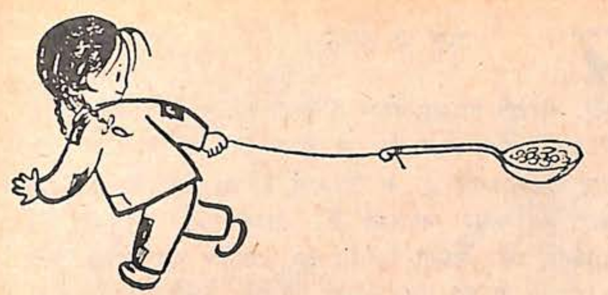


एक दिन लोहार क्वो ने एक बड़ी करछी बनाई। वह बहुत सुंदर थी। उसे देखकर लोहार स्वयं भी दंग रह गया। उस करछी को वह बेचना नहीं चाहता था। इसलिए उसने वह करछी अपने बड़े भाई को दे दी।

वह सुंदर करछी दरअसल मैं ही हूं। तुम किसलिए हंस रहे हो? यह मूल्यांकन मेरा अपना नहीं बल्कि लोहार का था। वह किसी की झूठी प्रशंसा कभी नहीं करता था।

इस तरह मैं लोहार के भाई के पास चली गई। वह एक छोटी-सी फूस की झोपड़ी में रहता था। उसकी झोंपड़ी की हालत काफ़ी ख़स्ता थी। उन दिनों लोग उसे "ता क्वो" कहकर पुकारते थे। दोनों भाई बाघ की तरह शक्तिशाली थे। ता क्वो पूरा दिन खेत में काम करता था। उसकी पत्नी और बेटी घर में रहती थीं।

उसकी बेटी का नाम याया था। वह चार साल की थी। सभी लोग उसे प्यार करते थे। उसके नाकनक्श तीखे थे और चेहरे पर काली आंखें चमकती रहती थीं। याया की मां उसकी दो चोटियां बनाती थी और उनमें लाल धागा बांध देती थी। जब मैं उनके परिवार में गई, तो याया बहुत ख़ुश हुई। उसका परिवार इतना ग़रीब था कि उसके पास कोई खिलौना भी नहीं था। उसका कोई दोस्त भी नहीं था। मां सारा दिन खाना बनाने और घर के दूसरे कामों में व्यस्त रहती थी।



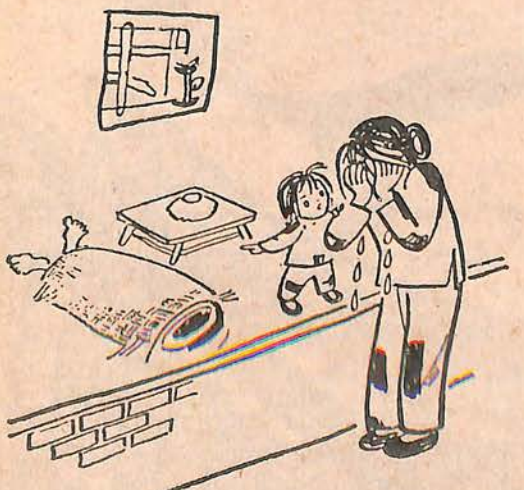
उसके पास याया के साथ खेलने का समय नहीं था। इसलिए याया अकेली ही खेला करती थी। वह मुझे छोटे-छोटे पत्थरों से भर देती और मेरे हैण्डिल में धागा बांध देती। फिर मुझे खींचती हुई यह गाना गाती :

छुकछुक गाड़ी, छुकछुक गाड़ी,
नानी के घर चली अगाड़ी;
भैया मेरा वहीं रहेगा,
भोजन नित भरपेट करेगा!

याया के भाई की वास्तव में मृत्यु हो चुकी थी। यह घटना मेरे वहां पहुंचने से कुछ समय पहले घटी थी। वह बीमार पड़ गया था। इलाज के लिए परिवार के पास पैसे नहीं थे। यहां तक कि उसे भरपेट खाना भी नहीं मिल पाता था। इस तरह उसकी मृत्यु हो गई थी। मरने के बाद उसे एक चटाई में लपेटकर दफ़ना दिया गया था। याया को कुछ भी समझ में नहीं आया था।

"मेरा भाई कहां जा रहा है?" उसने मां से पूछा था।

मां काफ़ी देर तक टकटकी लगाकर फ़र्श की ओर देखती रही थी। फिर उसे समझाने के लिए कह दिया था, "कुछ दिनों के लिए नानी के घर जा रहा है।"



"उसे वहां न भेजो, मां!" नन्ही याया ने रोते हुए कहा था। "अगर भैया नानी के पास चला गया, तो मेरे साथ कौन खेलेगा?"

"तुम्हारे भाई को भूख लगी है," मां ने अपने आंसू रोकते हुए कहा था। "नानी उसे भाप में पकी रोटी खिलाएगी।"

"मैं भी उसके साथ जाऊंगी!" नन्ही याया ज़िद करने लगी थी। "मुझे भी भूख लगी है। मुझे भी भाई के साथ जाने दो!"

"ज़िद न करो याया," मां ने कहा था। "कुछ दिन बाद मैं बड़ी गाड़ी में बिठाकर तुम्हें भी नानी के घर ले जाऊंगी।"

याया ने देखा था, चटाई में लिपटा उसका भाई न हिल रहा है और न बोल रहा है।

"भैया बोल क्यों नहीं रहा?" याया ने पूछा था।

मां की आंखों से आंसू झरने लगे थे।

"तुम्हारा भाई? ...तुम्हारा भाई सो रहा है।"

मां ने आंसू पोंछकर बेटे की लाश को उठा लिया था और बाहर चली गई थी।

उसे पहाड़ की तलहटी में दफ़ना दिया गया था। याया को कुछ पता नहीं चला था। उसे भाई की कमी हमेशा खटकती रहती थी। इसलिए वह करछी को गाड़ी समझकर नानी के घर चलने का गीत गाती रहती थी।

याया और उसकी मां मुझे बहुत पसंद थीं। उसकी मां मेरी अच्छी तरह देखभाल करती थी। मुझे इस्तेमाल करने के बाद वह हमेशा धो-पोंछ देती थी, ताकि जंग न लग जाए। याया भी मेरे साथ बहुत अच्छा बरताव करती थी। वह हर रोज़ मेरे साथ खेलती थी। तब मैं भी नौजवान थी। इसलिए यह सब मुझे बहुत पसंद था। हम दोनों अच्छे दोस्त बन गए।

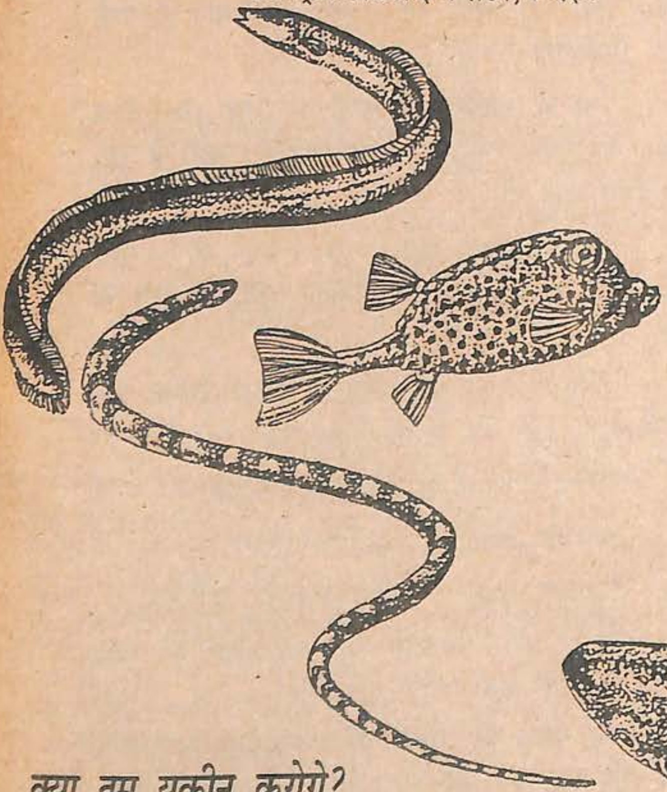
सिर्फ याया के पिता ही ऐसे थे जो मेरे साथ अच्छा बरताव नहीं करते थे। मैं नहीं जानती थी कि वे ऐसा क्यों करते हैं। वे हमेशा गुस्से में भरे रहते थे। वे अक्सर याया की पिटाई करते थे और मुझे दूर फेंक देते थे। एक बार उन्होंने मुझे ज़मीन पर इतनी ज़ोर से पटका कि मेरा हैंडिल टूटने वाला हो गया। वे दिन रात ज़मींदार को कोसते रहते थे और शिकायत

(शेष पृष्ठ 40 पर)

चलते-फिरते तथ्य

पानी में चलन-I

दीपंकर गोस्वामी
इंडस्ट्रियल डिजाइन सेंटर, बम्बई.



नदी, तालाब या मछलीघर में तैरती हुई मछलियों को देखने में बहुत मज़ा आता है। वे कभी देर तक पानी में एक तरह स्थिर रहती हैं, या उछलती हैं, या फिर बिजली की तरह इधर-उधर लपकती हैं। वास्तव में, मछलियों के आकार और उनकी गतियों को देखकर हम मोहित होते हैं। फिर भी हमें एक मामूली सवाल - मछली कैसे तैरती है? - का उत्तर ठीक से समझ में नहीं आता है। वैज्ञानिकों ने इस विषय पर अनुसंधान भी किया है और उनकी खोजों से हमें पता चला है कि मछलियों के चलन के कई तरीके होते हैं ...!

बाम मछली और सांप अपने शरीर को लहराकर आगे बढ़ते हैं। ट्रंक मछली अपने पंखों से पानी को हटाकर जगह बनाते हुए धीरे-धीरे तैरती हैं। शार्क और ट्राउट मछलियां अपने पूंछपंख की मदद से शरीर को हिलाते हुए आगे बढ़ाती हैं जबकि व्हेल अपनी पूंछ पर स्थित उभार (पालि) की मदद से तैरती है।

पानी एक घना माध्यम है, जो तेज़ गति के लिए अधिक सुविधाजनक नहीं है। परंतु पानी का घनत्त्व अधिक होने के कारण, वह उसमें डूबती हुई वस्तुओं को उछालता है। इसीलिए व्हेल जैसा विशाल प्राणी भी आराम से तैरता रहता है।



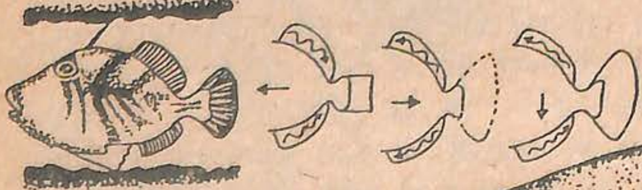


क्या तुम यक़ीन करोगे?

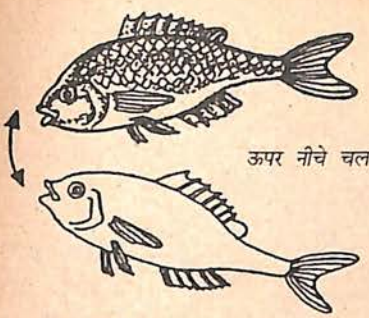
*आमतौर पर मछलियों के शरीर में एक हवा की थैली होती है, जिसकी मदद से उनका शरीर पानी में ठहरा रहता है। लेकिन **शार्क** के शरीर में यह थैली नहीं होती है, इसलिए उसको हमेशा तैरते रहना पड़ता है, नहीं तो वह तल में बैठ जाएगी।*

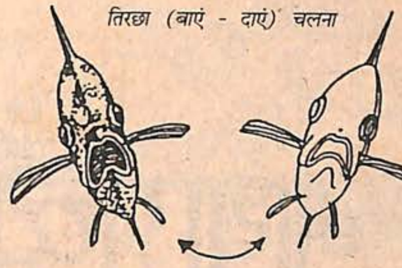


*अपने शत्रुओं से बचने के लिए **पिकासो** मछली दरार में छिप जाती है। दरार में घुसने के लिए वह अपनी पीठ पर लगे कांटे और शरीर के निचले भाग के गुटके जैसी संरचना की मदद लेती है। आगे-पीछे और नीचे चलने के लिए अपने फीता पंखों को आवश्यकतानुसार चलाती है।*







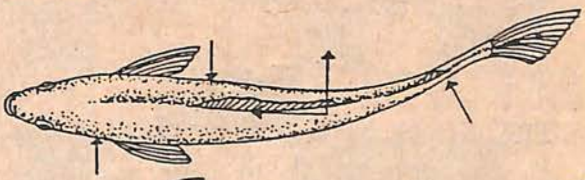




पंख और शरीर का आकार

पंखों से स्थिरता और संतुलन बना रहता है। पंख उन गतियों को रोकता है जो मछली को अपने शारीरिक अक्ष से हटाने की कोशिश करती हैं। जैसे सीध से ऊपर नीचे-चलना, तिरछा (बाएं - दाएं) चलना, या बाएं-दाएं लुढ़कना। इस प्रकार पंखों के सहारे मछली अपने पथ पर टिक पाती है।

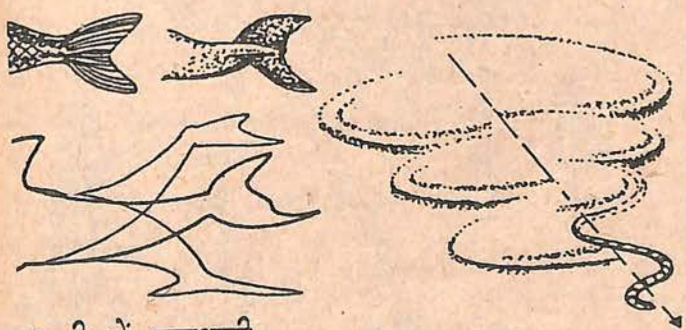


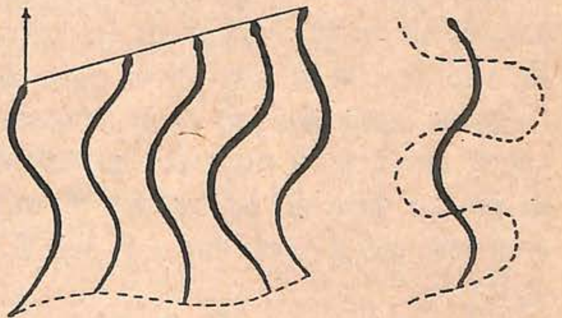




जब कोई वस्तु पानी में तैरती है तब उसके चारों तरफ पानी बहता है। यह बहाव अनियमित हो सकता है, या बराबर या फिर बदलता हुआ। यह वस्तु के आकार से तय होता है। मछलियों का शारीरिक आकार ऐसा होता है कि पानी आसानी से उनके चारों तरफ बहता है। और मछली के तैरने से पानी में बहुत कम हलचल होती है।

जल सांप अपने शरीर से पानी में धनुष लहर उत्पन्न करके तैरता है। उसका पथ नदी के घुमावदार बहाव जैसा होता है।





पानी में स्तनधारी

मछली की पूंछ बाएं - दाएं घूमकर मछली को आगे धकेलती है। इसी प्रकार व्हेल और डाल्फिन जैसे पानी में रहने वाले स्तनधारी अपनी आड़ी पूंछ को ऊपर नीचे चलाकर तैरते हैं। डाल्फिन एक बढ़िया तैराक है जो पानी में बहुत कम हलचल पैदा करता है। वह अपने शरीर के आकार को थोड़ा - थोड़ा बदलकर पानी को बिना अशांत किए तैरता रहता है। इसमें उसकी त्वचा मददगार होती है जो तीन परतों में बनी होती है।

घुमावदार रास्ता

मछली अपनी पूंछ से पानी को धकेलती है। प्रतिक्रिया में पानी उसको आगे की तरफ धकेलता है। पानी मछली को दाएं - बाएं से दबाकर बगल के बलों को भी संतुलित करता है।

छुरी मछली अपने मलाशय पंख को लहराकर आगे - पीछे तैरती है।

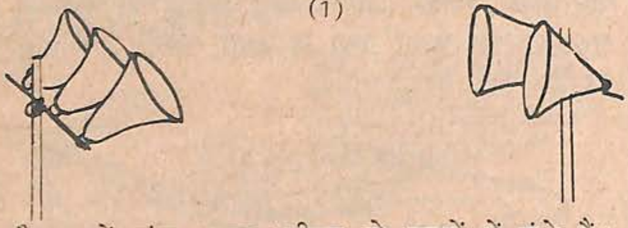






माथापच्ची

(1)



मैदान में पांच लाउड स्पीकर दो समूहों में बंधे हैं। तीन एक खंभे पर और दो उससे पचास मीटर दूर स्थित खंभे से। ऐसी जगह कहां होगी, जहां दोनों खंभों से समान शक्ति की ध्वनि सुनाई दे?

(2)

हम एक बार पूना गए। सिटी बस में गलती से अपना कुछ ज़रूरी सामान भूल गए। अब क्या करें! बस स्टैंड वालों से कहा, तो नंबर पूछने लगे। हमारी आदत थी कि हम बसों तथा दूसरे वाहनों के नंबर उल्टे-सीधे करके उनकी संख्याओं को आपस में जोड़-घटाकर माथापच्ची करते रहते थे, इसलिए हमें बस नंबर की कुछ बातें याद रह गईं। पहली तो यह कि उसके अंकों को उनकी जगह पर ही उलट-पुलटकर रख दें तो नई संख्याएं बन सकती थीं। दूसरी यह कि अगर प्लेट को उलटकर लगा दें तो जो संख्या बनेगी वह किसी संख्या का वर्ग मूल होगी। हां, यह पता चला कि बसों की संख्या सिर्फ़ 500 है। यानी नंबर 1 से 500 के बीच ही होगा।

क्या हम अपनी बस का नंबर खोज पाए?

(3)

एक मैदान में बीचों-बीच एक लड़का खड़ा है। उसके चारों तरफ क्रमशः लड़के और लड़कियों के घेरे बने हैं। पहले घेरे में 6 लड़के हैं, दूसरे घेरे में 12 लड़कियां, फिर तीसरे घेरे में 18 लड़के। क्रमशः इसी तरह हर घेरे में 6 लड़के या लड़कियां बढ़ते जाएंगे। बताओ अगर ऐसे कुल ग्यारह घेरे हों, तो लड़के - लड़कियों की कुल संख्या, तथा लड़के और लड़कियों की अलग-अलग संख्या क्या होगी?

(4)

ऐसी कौन-सी चीज़ है, जो आधी होने पर भी पूरी कहलाती है?

(5)

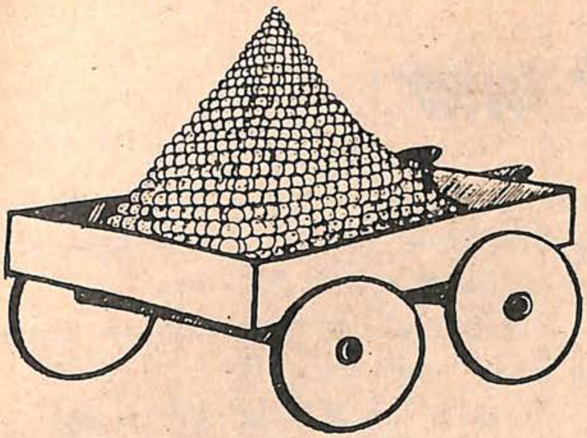
रोको, मत जाने दो। क्या तुम इस वाक्य में सिर्फ़ एक परिवर्तन करके इसका अर्थ बिलकुल उलटा कर सकते हो! ध्यान रहे, चारों शब्द और उनकी जगह बदलने की अनुमति नहीं है!

(6)



ये लोग पहाड़ पर घूमते - घूमते रास्ता भूल गए हैं! ज़रा मदद करो!

(7)



एक चौकोर पटिए की सतह पर 16 फल आते हैं। अगर फलों को ऊपर दिए चित्र की शक्ल में जमाना है, तो बताओ कुल कितने फल जमाए जा सकते हैं?

यहां दो-दो वाक्यों के पांच जोड़े दिए गए हैं। इनके लिए कोई एक ऐसा शब्द ढूंढो जो बाएं से पढ़ने पर **क** वाक्य का अर्थ बताए और दाएं से पढ़ाने पर **ख** वाक्य का।

1. (क) हवा का दूसरा नाम
   (ख) रोटी इसके बिना भी आंच में पक सकती है।
2. (क) सतह, मोड़ना
   (ख) घायल, मारा गया
3. (क) राख
   (ख) बचाव
4. (क) किस समय
   (ख) फालतू में बोलने का एक शब्द
5. (क) नया
   (ख) जंगल

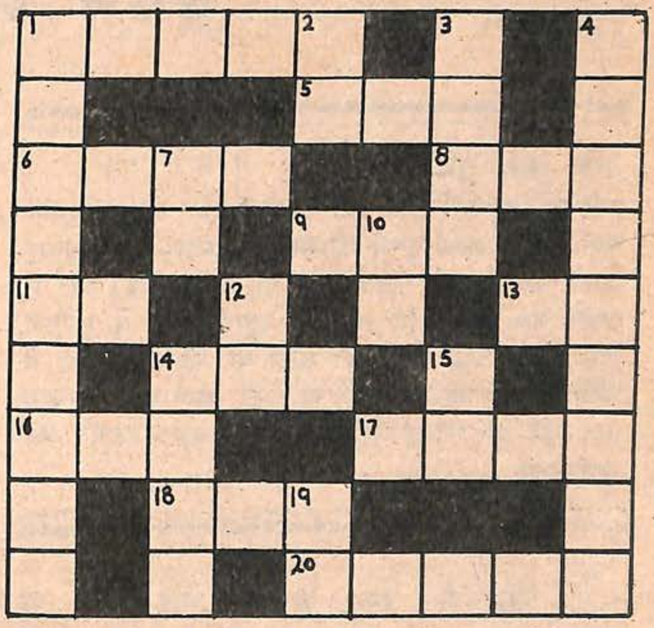
☐ आशा अय्यर, नेपानगर

वर्ग पहेली - 32 : हल

बाएं से दाएं : 1. चकला 3. बेलन 6. ज़मा 8. खट 9. बंबा 10. दमन 14. सकल 16. आग 17. बाघ 18. बल 20. पूनम 21. ताऊन

ऊपर से नीचे : 1. चकबंदी 2. लाज़ 4. लखन 5. तट 7. माद 11. मठा 12. डंक 13. अगहन 14. सघन 15. लब 17. बापू 19. लता

(यह पहेली क्रमांक - 14 पर प्रकाशित हो चुकी है। परंतु इसकी जाली ठीक से नहीं बनी थी। अतः इसे पुनः प्रकाशित कर रहे हैं।)



संकेत : बाएं से दाएं

1. सचेत रहना (5)
2. जल के पीछे, आधी वायु (3)
6. एक प्राचीन कवि (4)
8. धान का लावा (3)
9. दुनिया (3)
11. अभिव्यक्ति का साधन (2)
13. चुटकुला खत्म हुआ, अब .... (2)
14. अशिक्षित (3)
16. नाक के बीच यह का सिर, अभिनेता (3)
17. नदी तट पर लगने वाला फल (4)
18. एक प्रकार की महीन सिलाई (3)
20. प्रणाम (5)

संकेत : ऊपर से नीचे

1. रामचरित मानस के एक दोहे का अंश (2,2,3,2,)
2. प्यार जताने में मुकुट (2)
3. हवा और उल्टे ताल में जेल (4)
4. एक प्रसिद्ध दोहे की पंक्ति (2,2,1,2,2)
7. एक मिठाई (2)
10. झूठा - सच्चा (2)
12. पैर की आहट, रेखा गणित का एक शब्द (2)
14. मुगल बादशाह (4)
15. रहने की जगह (2)
19. सवारी (2)

भूगर्भ की यात्रा

अब तक तुमने पढ़ा ...

प्रोफ़ेसर लिडेनब्रॉक को एक पुरानी किताब से एक पुराना पर्चा मिला। उसमें भूगर्भ की यात्रा का संदेश था। प्रोफ़ेसर अपने सहायक को लेकर यात्रा पर निकल पड़े। बाद में उन्होंने एक पथप्रदर्शक को भी अपनी यात्रा में शामिल कर लिया। एक पहाड़ की चोटी पर पहुंचने के बाद वे चोटी पर बने गड्ढों से नीचे की ओर उतरने लगे। लगभग 300 फुट की गहराई पर उन्होंने पहला पड़ाव डाला। अब आगे पढ़ो ....!

चाचाजी एक बिजली वाले लैंप को जलाकर यात्रा पर चलने के लिए तैयार हो गए। काफ़ी प्रकाश हो गया था अब। फिर हम चल पड़े। हमें अंधेरे रास्ते से होकर जाना था। मैंने अंतिम बार आकाश की ओर सिर उठाकर देखा।

हम एकदम सीधे चले जा रहे थे। उधर या इधर कहीं मुड़ना तो था नहीं। रास्ता भी कम ख़तरनाक न था। हमें बड़ी सावधानी रखनी पड़ रही थी कि गिरें नहीं।

फिर भी अंदर कोई ख़ास गरमी नहीं थी। केवल 40° तापक्रम ही बढ़ा था।

क़रीब 8 बजे शाम को चाचा जी ने रुकने के लिए कहा। हैंस तुरंत ही बैठ गया। अपने लैंप हमने चट्टानों पर लटका दिए।

आप सोचेंगे कि यहां हवा तो बिल्कुल नहीं चल रही होगी लेकिन ऐसा नहीं था। उस समय भी हवा बह रही थी। यह हवा कहां से आ रही थी, मैं इतना अधिक थका और भूखा था कि इसके लिए अधिक सोच नहीं सका।

लगातार 7 घंटे ख़तरनाक रास्ते से यात्रा करना किसी की भी शक्ति से बाहर है। इसलिए रुकने की आज्ञा सुनकर मैं बड़ा ख़ुश हुआ। हैंस ने भोजन चट्टानों पर फैलाना शुरू किया।

लेकिन वहां एक ऐसी बात थी जिसने मुझे चिंतित कर दिया। बात यह थी कि अपने साथ लाया हुआ आधा पानी हम खर्च कर चुके थे। चाचा जी को यहां कुछ जलस्रोतों के मिलने की आशा थी लेकिन अब तक तो एक भी न दिखाई दिया था।

"क्या झरने आदि न मिलने से तुम्हें आश्चर्य हो रहा है?" उन्होंने पूछा।

"जी हां, मुझे तो हो रहा है। यही नहीं, मुझे तो इसकी फ़िक्र भी हो रही है कि हमारे पास सिर्फ़ पांच दिन के लिए ही पानी और है। इसके बाद हम क्या करेंगे!"

"इसके लिए तुम बिलकुल चिंता मत करो," उन्होंने उत्तर दिया, "मुझे पूरा विश्वास है कि आगे हमें पानी ज़रूर मिल जाएगा।"

"लेकिन कब?"

"जैसे ही हम लावा की दीवारें पार कर लेंगे वैसे ही हमें मिलना चाहिए। ऐसे स्थानों पर तो अनेकों झरने मिलते हैं।"

एक बात आश्चर्यजनक थी। हालांकि हम 6000 फुट की गहराई तक उतर आए थे फिर भी तापक्रम में केवल 9° का ही परिवर्तन हुआ था। अतः उस समय 15° तापक्रम ही था वहां पर। क़ायदे से तो यहां पर 81° तापक्रम होना चाहिए था।

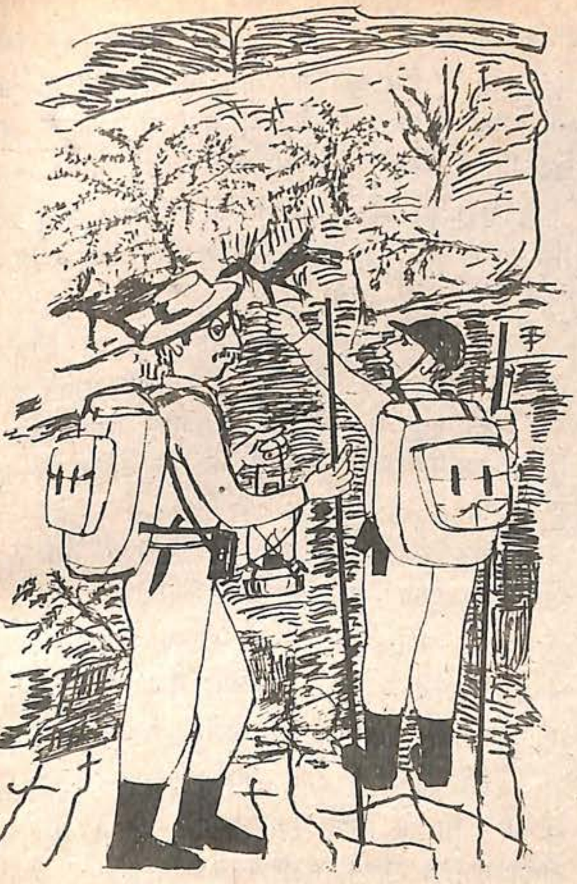
तब ऐसा लगा चाचा जी और हम्फ्री डेवी का कहना ही ठीक था।

दूसरे दिन 30 जून को सुबह छः बजे हम फिर से चल पड़े। हम अब भी लावावाले रास्ते से जा रहे थे। 12 बजे तक वैसे ही चलते गए। हैंस हमारे आगे आगे चल रहा था, एक स्थान पर रुक गया।

"अरे!" चाचाजी चीख पड़े, "यह रास्ता तो अब समाप्त हो गया।"

हमारे सामने अब दो ही रास्ते थे—एक पूर्व दिशा में और दूसरा पश्चिम दिशा में। हम किस पर चलें? यह एक कठिनाई थी।

चाचाजी ने अधिक प्रतीक्षा नहीं की। उन्होंने पूर्व दिशा के मार्ग की ओर चलने का इशारा किया। हम उसी तरफ चल पड़े।



लेकिन यह हमारी ग़लती थी। यह रास्ता बहुत कम ढलावदार था। मुझे ऐसा लग रहा था कि कहीं न कहीं कोई ग़लती अवश्य है। लेकिन चाचा जी से यह कहने की हिम्मत न पड़ी। शाम को 6 बजे तक चलते रहने पर भी थकावट नाम मात्र को भी न थी। हमें कुछ समय बाद ही ज्ञात हो गया कि रास्ता अब और आगे नहीं गया। अपनी ग़लती अब हम जान चुके थे। हम रुक गए। थोड़ा-सा खाना खाकर हम सो गए।

दूसरी सुबह जब हम जगे तो हमें काफ़ी ताज़गी मालूम पड़ रही थी। हमें ठीक रास्ते पर लौटने की तैयारी करनी पड़ी। थोड़ी ही दूर चल पाए थे कि मुझे लगा जैसे कि मुझे ऊपर की तरफ चढ़ना पड़ रहा हो।

"जल्दी-जल्दी चलो!" प्रोफ़ेसर कुछ उत्तेजित होते हुए बोले, "तुम इतने पीछे कैसे चल रहे हो।"

"मैं रुकना चाहता हूं। मैं इतना तेज़ नहीं चल सकता।" मैंने उत्तर दिया।

"क्या कहा? ऐसी आराम की सड़क पर तीन घंटे तक चलने से ही इतने थक गए?" चाचा जी ने पूछा।

"होगी आराम की आपके लिए, लेकिन मैं तो थक गया।"

आगे बढ़ते-बढ़ते मेरे मुंह से चीख सी निकल पड़ी।

चाचा जी ने सुनकर कहा, "क्या बात है?"

"देखिए" मैंने उन्हें कई तरह के पत्थर दिखाते हुए कहा।

"क्या देखूं?"

"हम लावा को नीचे ही छोड़ आए हैं। और अब हम उस स्तर पर चल रहे हैं जिसमें पत्थरों के बीच जानवरों के पथराए हुए अवशेष छिपे पड़े होंगे।"

"क्या तुम्हारा ऐसा ख्याल है?"

"देखिए न। कुछ परीक्षा कर लीजिए।"

मैं सोचता था कि प्रोफ़ेसर मारे आश्चर्य के चीख पड़ेंगे, लेकिन वे एक शब्द भी बोले बिना बढ़ते चले गए।

क्या वे कुछ समझ थे या नहीं? क्या वे ग़लत रास्ते पर चले जाने के कारण शरम के मारे चुप थे?

अगर मेरा ख़्याल ठीक है, तो पशुओं और पौधों के उन पथराये हुए अवशेषों को अवश्य दिखाई पड़ना चाहिए।

मुझे शीघ्र ही अपना विचार ठीक होने का प्रमाण भी मिल गया। दीवारों पर पौधों और पशुओं के छापे बने हुए थे।

"देखिए," मैंने चाचा जी से कहा।

"हां, हां। देख रहा हूं। ये तो बहुत साधारण हैं। मेरे संग्रहालय में ऐसे अवशेषों की कमी नहीं।"

"लेकिन क्या आप देख नहीं रहे हैं कि—"

"सब कुछ देख रहा हूं जो तुम कहना चाहते हो। अब हम ठोस चट्टानें छोड़ लावा के ऊपर गुजर रहे हैं। संभव है, इस ग़लत रास्ते पर हों। इसका ठीक-ठीक पता तो इस रास्ते के अंत में ही चलेगा।"

"चाचा जी, शायद आप बिलकुल ठीक राह पर हैं।" मैं बोला "फिर भी यह मत भूल जाइएगा कि हमारे सामने एक ख़तरा भी है। एक ऐसा ख़तरा जो हर क्षण बढ़ता ही जा रहा है!"

"कैसे ख़तरा?"

"हमारे पास पानी बहुत कम है।"

"तो फिर हम पानी कम पिएंगे," चाचा जी बोले।

खाना खाने के समय मैंने देखा कि तीन दिन के लिए पानी शेष था।

दूसरे दिन हम चुपचाप चलते रहे। रास्ता भी अब सीधा था। चट्टानें अब भी वैसी ही थीं एकदम लाल। जैसे जैसे हम आगे चलते गए, यह स्पष्ट होता गया कि हम ग़लत रास्ते पर है लेकिन प्रोफ़ेसर लिड़ेनब्रॉक ने इस पर कोई ध्यान नहीं दिया। वे दो चीज़ों की आशा में थे कि या तो हमें नीचे जाता हुआ कोई सीधा रास्ता मिल जाएगा और या फिर यह रास्ता आगे चलकर समाप्त हो जाएगा। हम बराबर आगे बढ़ते गए। शाम हो गई थी। लेकिन कोई परिवर्तन नहीं दिखाई दिया।

शुक्रवार की रात के बाद मेरी प्यास असह्य हो गई थी। उस समय मुझे दीवारों के रंग में कुछ परिवर्तन मालूम दिया। अब चट्टानों का रंग काला था। ये कोयले की चट्टानें थीं।

"देखिए, चाचाजी! कोयला!"

"मुझे मालूम है" चाचा जी बोले, "इससे हमें क्या लेना-देना? यह भोजन करने का समय है।"

शनिवार की सुबह छः बजे तक हम फिर चल पड़े। शाम के छः बजे तक हम ऐसे ही चलते गए। अब हम एक दीवार के सामने खड़े हुए थे जिसमें कि दाहिने, बाएं, ऊपर या नीचे किसी तरफ से भी निकलने का रास्ता न था। सड़क अब ख़त्म हो गई थी।

"चलो, अच्छा ही हुआ!" चाचाजी बोले, "हमें पता तो चल गया कि हम ग़लत रास्ते पर हैं। सैकनसेम इस रास्ते से कभी न आया होगा। अब हमें उस जगह तक लौट चलना पड़ेगा जहां पर हमने दो सड़कें देखी थीं।"

"जी हां," मैंने कहा, "अगर हममें इतनी शक्ति हो।"

"हम में शक्ति की क्या कमी है?"

"क्योंकि हमारे पास कल पानी समाप्त हो जाएगा।"

हमने शीघ्र से शीघ्र चल पड़ने का निश्चय किया। समय बेकार में बिल्कुल नहीं खोना था, क्योंकि दो सड़कों के मिलने वाले स्थान तक वापस जाने में कम से कम तीन दिन का समय लगना था।

बड़े कठिन थे वे तीन दिन। पहले दिन ही शाम तक सारा पानी समाप्त हो गया। अब हमें बहुत ज़ोर से प्यास लगी। थोड़ी देर बाद ही मुझे लगा कि अब अधिक चलना कठिन है। कई बार तो गिर ही पड़ा था। भाग्यवश हमारे रास्ते में नीचे की तरफ ढाल था। चढ़ना तो इस अवस्था में असंभव ही हो जाता हमारे लिए।

अंत में बुधवार 8 जुलाई को प्यास से अधमरे होकर उस जगह पहुंचे जहां पर दो रास्ते मिल जाते थे। सुबह के दस बजे थे। अब मुझमें चलने की ज़रा भी शक्ति न रह गई थी। मैं मुर्दों जैसा होकर वहां लेट गया। इसके बाद गहरी नींद में सो गया।

कुछ देर बाद ही चाचा जी मेरे पास आए और मुझे अपनी बांहों के सहारे उठाकर बड़े कोमल स्वर में बोले, "मेरे प्यारे बच्चे!"

मैंने इसके पहले कभी भी चाचा जी को इस तरह से बोलते नहीं सुना था। मैंने उनके कांपते हाथों को अपने हाथ में थाम लिया। उन्होंने ऐसा करने में मुझे रोका नहीं और आंसुओं से भरी आंखों से मुझे देखते रहे।

मैंने उन्हें पानी की बोतल उठाकर मेरी तरफ बढ़ाते हुए देखा। तभी वे बोले, "पियो!"

यह क्या था? उनका मतलब क्या था? क्या चाचा जी पागल हो गए थे? मेरी समझ में कुछ भी न आया।

"पियो!" वे फिर से बोले।

मैंने बोतल ले ली और पिया। हां, वह पानी ही था। था तो सिर्फ एक घूंट ही लेकिन मुझे पुनः जीवन दान दे चुकने के लिए काफ़ी था।

मैंने चाचा जी का धन्यवाद प्रकट करने के लिए हाथ जोड़ लिए।

"हां," चाचा जी बोले "एक घूंट पानी! सुनते हो? अब एक बूंद भी पानी नहीं बचा है। इतना मैंने ख़ास तौर से तुम्हारे लिए रख छोड़ा था। मुझे यह पानी न पी डालने के लिए अपने से ही बीसियों बार नहीं बल्कि सैकड़ों बार संघर्ष करना पड़ा। लेकिन नहीं मैंने, यह घूंट भर पानी तुम्हारे लिए ही रख छोड़ा था।"

"उफ चाचा जी!" मैं बोला। बड़े-बड़े आंसू मेरी आंखों में भर आए।

"हां मेरे बच्चे, यहां आकर मैंने जाना कि तुम पानी के बिना अधमरे हो चले हो। मैंने इसी क्षण के लिए तो रख छोड़ा था इतना पानी।"

मैं कृतज्ञतापूर्ण दृष्टि से उन्हें देखने लगा। "अब तो हमारे सामने सिर्फ़ एक तरीका ही बचा है और वह है वापस लौट चलना।" मैं बोला।

चाचा जी ने मेरी तरफ से आंखें फेर लीं। लगता था, मुझसे आंख मिलाने में उन्हें शर्म आ रही है।



"हमें वापस लौट चलना चाहिए," मैं चिल्लाया "क्या हम पहाड़ पर चढ़ भी पाएंगे इस दशा में?"

"वापस लौटूं," चाचा जी ऐसे बोले जैसे वह मुझसे कुछ न कहकर अपने से ही कह रहें हों।

"अच्छी बात है, बिना एक क्षण भी खोए लौट जाओ।" कुछ देर तक हममें से कोई भी न बोला।

अंत में चाचा जी ने ही शांति भंग की और बोले, "क्या इस थोड़े से पानी ने तुम्हें कुछ अधिक बहादुर नहीं बना दिया? मैं तो अब भी तुम्हें निराशा भरे स्वर में बोलता हुआ देख रहा हूं।"

"क्या कहा," मैं कुछ व्यग्र होकर बोला, "आपके कहने का क्या मतलब है कि आप लौटने की कोशिश नहीं करना चाहते?"

"क्या मैं यात्रा स्थगित कर दूंगा?" चाचा जी ने उत्तर दिया, "और वह भी ठीक उस समय जब कि हर चीज़ हमारी सफलता की पुष्टि कर रही हो। कभी नहीं।"

"तो फिर हमें मरने के लिए तैयार हो जाना चाहिए!"

"नहीं, नहीं, तुम लौट जाओ! हैंस को भी अपने साथ लेते जाओ। मुझे अकेला छोड़ दो।"

"आपको यहीं छोड़ दूं?"

"हां, मैं कह रहा हूं, मुझे यहीं छोड़ दो। मुझे तो यात्रा करना ही है। या तो मैं इसे पूरी करूंगा या फिर नहीं लौटूंगा। जाओ, तुम जाओ।"

चाचा जी बड़े परेशान हो रहे थे। उनका स्वर जो अभी तक बड़ा कोमल था, एकाएक बड़ा कठोर और क्रोधपूर्ण हो गया। वे करीब-करीब असंभव जैसी बात के लिए मन ही मन अपने से संघर्ष कर रहे थे। मैं उन्हें यहां अकेला कैसे छोड़ सकता था?

हमारा पथप्रदर्शक हमारी बातों में कोई रुचि नहीं ले रहा था। वह समझ चुका था कि क्या होने जा रहा था। हमारी गतिविधि ने उसे बता दिया था कि हममें से प्रत्येक अलग-अलग रास्ते पर चलने की कोशिश कर रहा है। चाचा जी की इच्छा पर—रुकने या चले जाने—दोनों पर तैयार था वह।

मैंने उसे इशारा किया कि वह भी मालिक से वापस लौट चलने के लिए कहे।

"मालिक!" वह चाचा जी से बोला, "मालिक!"

मैं कुछ गुस्से में आकर बोला, "यह तुम्हारे जीवन के मालिक नहीं हैं। हम वापस लौटेंगे और इन्हें भी साथ वापस चलना पड़ेगा। समझे?"

यह कहकर मैं हैंस को अपनी ओर खींचने लगा। लेकिन चाचा जी मुझसे बोले, "रुको, गुस्सा मत

करो। ज़रा सुनो तो सही। मैं तुमसे कुछ कहना चाहता हूं।''

मैंने चाचा जी के चेहरे की ओर देखा।

''पानी की कमी,'' चाचा जी बोले, ''हां, हमें रोक रही है न। इधर पूर्व की तरफ लावा, कोयले और पत्थर के अलावा कुछ भी न मिलेगा लेकिन पश्चिम की तरफ जाने में हमें पानी ज़रूर मिलेगा।''

मैं फिर भी रुकने के लिए तैयार न हुआ।

''पूरी बात तो सुनो पहले,'' प्रोफ़ेसर बोले, ''जिस समय तुम बेहोश पड़े थे, मैं रास्ते की परीक्षा करने गया था। रास्ता सीधें पृथ्वी के हृदय की ओर गया है। कुछ घंटों में ही हम उन चट्टानों तक पहुंच जाएंगे जिनके नीचे से होकर पानी बहता है। इसी रास्ते से अर्नेसैकनसेम भी गया था। उसे भी पानी की उतनी ही आवश्यकता रही होगी जितनी हमें है। उसे पानी अवश्य मिला होगा। जहां उसे पानी मिला होगा वहीं हमें भी मिलेगा। मुझे सिर्फ़ एक दिन का मौका और दे दो। अगर इतने समय में हमें पानी न मिला तो मैं वादा करता हूं कि वापस लौट चलेंगे।''

मुझे उनका कहना ठीक ही लगा। ''बहुत अच्छा'' मैं बोला, ''मैं तैयार हूं। हमें तुरंत ही चल देना चाहिए।''

हम सौ क़दम भी नहीं चल पाए होंगे कि चाचा जी लैंप का प्रकाश दीवार पर फेंकते हुए चिल्लाए।

''हम बिलकुल ठीक रास्ते पर हैं। आगे बढ़े चलो। बढ़े चलो!''

शाम के 8 बज गए थे। लेकिन अभी तक पानी मिलने का कोई चिह्न नहीं दिखाई दिया। बेहद थका होने पर भी मैं जितनी अच्छी तरह चल सकता था, चलता रहा क्योंकि मैं नहीं चाहता था कि चाचा जी रुकें। अंत में मेरी सारी शक्ति जाती रही और मैं, ''मैं मर रहा हूं। मेरे पास आओ जल्दी से,'' चिल्लाता हुआ ज़मीन पर गिर पड़ा।

चाचा जी मेरे पास लौट कर आए। उन्हें गुस्से से भरा देख मैंने आंखें बंद कर लीं। जब मेरी आंखें खुली तो मैंने देखा कि मेरे दोनों साथी भी बिलकुल निश्चेष्ट होकर लेटे हुए हैं। क्या वे सो रहे थे? जहां तक मेरा सवाल है—मैं तो एक सेकेंड के लिए भी नहीं सोया था।

(अगले अंक में जारी)

जूलेवर्न के उपन्यास '*ए जर्नी इन टू दी सेंटर ऑफ अर्थ.*' का अनुवाद। अनुवादक : प्रभात किशोर मिश्र। सौजन्य : इंडियन प्रेस, इलाहाबाद। सभी चित्र : शोभा घारे।

(पृष्ठ 35 का शेष)



करते रहते थे कि वह उनका ख़ून चूस रहा है। ज़मींदार कौन होता है और वह इतना बुरा क्यों होता है, यह सब उस समय मेरी समझ के बाहर था।

जब कभी वे मुझे बुरी तरह ज़मीन पर पटक देते, तो मुझे उनके छोटे भाई की याद सताने लगती थी। पर छोटे भाई से मेरी मुलाकात फिर कभी नहीं हुई।

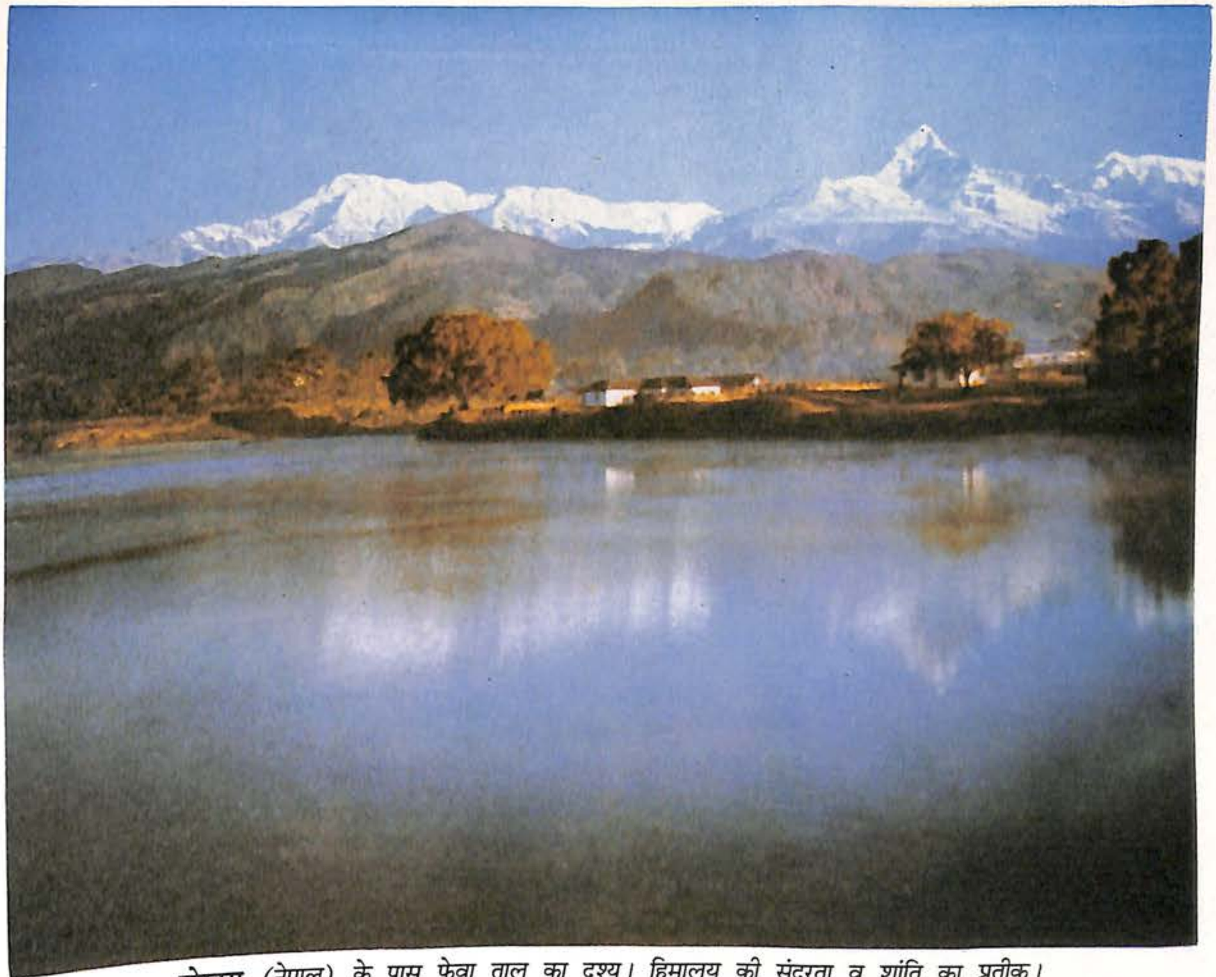
एक दिन याया के पिता रोते हुए घर लौटे। मैंने सोचा, आज वे मुझे फिर ज़मीन पर पटकने जा रहे हैं। पर उन्होंने मुझे उठाया और ज़ोर से पकड़ लिया। उनकी आंखों से आंसू टपक रहे थे। आंखें लाल हो गई थीं। मैं उन्हें देखकर बहुत डर गई। पर जब उन्होंने मुझे ज़मीन पर नहीं पटका तो हैरान रह गई। वे मेरी ओर टकटकी बांधकर देखते रहे।

''मेरे प्यारे भैया!'' वे सुबकते हुए बोले। ''वे लोग तुम्हें ज़बरन फ़ौज में भरती कर ले गए और मैं तुम्हारी कोई मदद नहीं कर सका। अगर मेरे पास कुछ पैसे होते, तो तुम्हें ज़रूर बचा लेता। तब तुम्हें इस तरह बलि का बकरा न बनना पड़ता।''

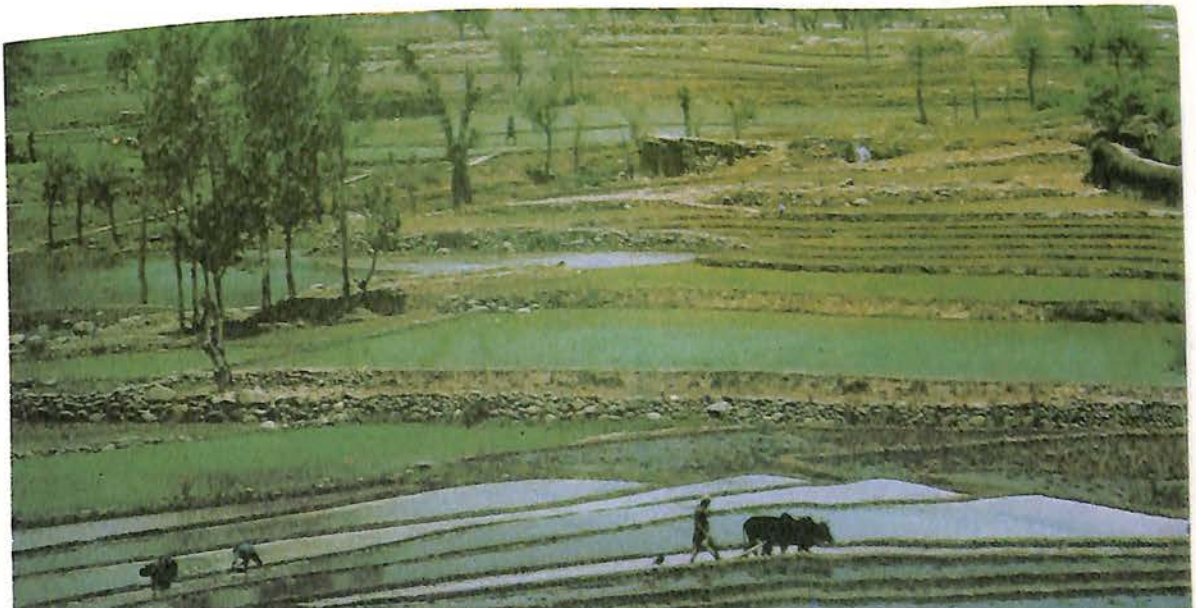
बाद में याया के पिता ने सारी घटना अपनी पत्नी को विस्तार से सुना दी। तब कहीं मुझे सारी बात पता चली। उनके लोहार भाई को ज़बरन सेना में भरती कर लिया गया था।

यह सुनकर मैं भी रो पड़ी। वह लोहार सचमुच एक बहुत अच्छा आदमी था। मुझे करछी का रूप उसी ने तो दिया था।

मूल लेखक : सुन यओच्युन
अनुवादक : जानकी एवं श्यामा बल्लभ
सभी चित्र : शन फेई

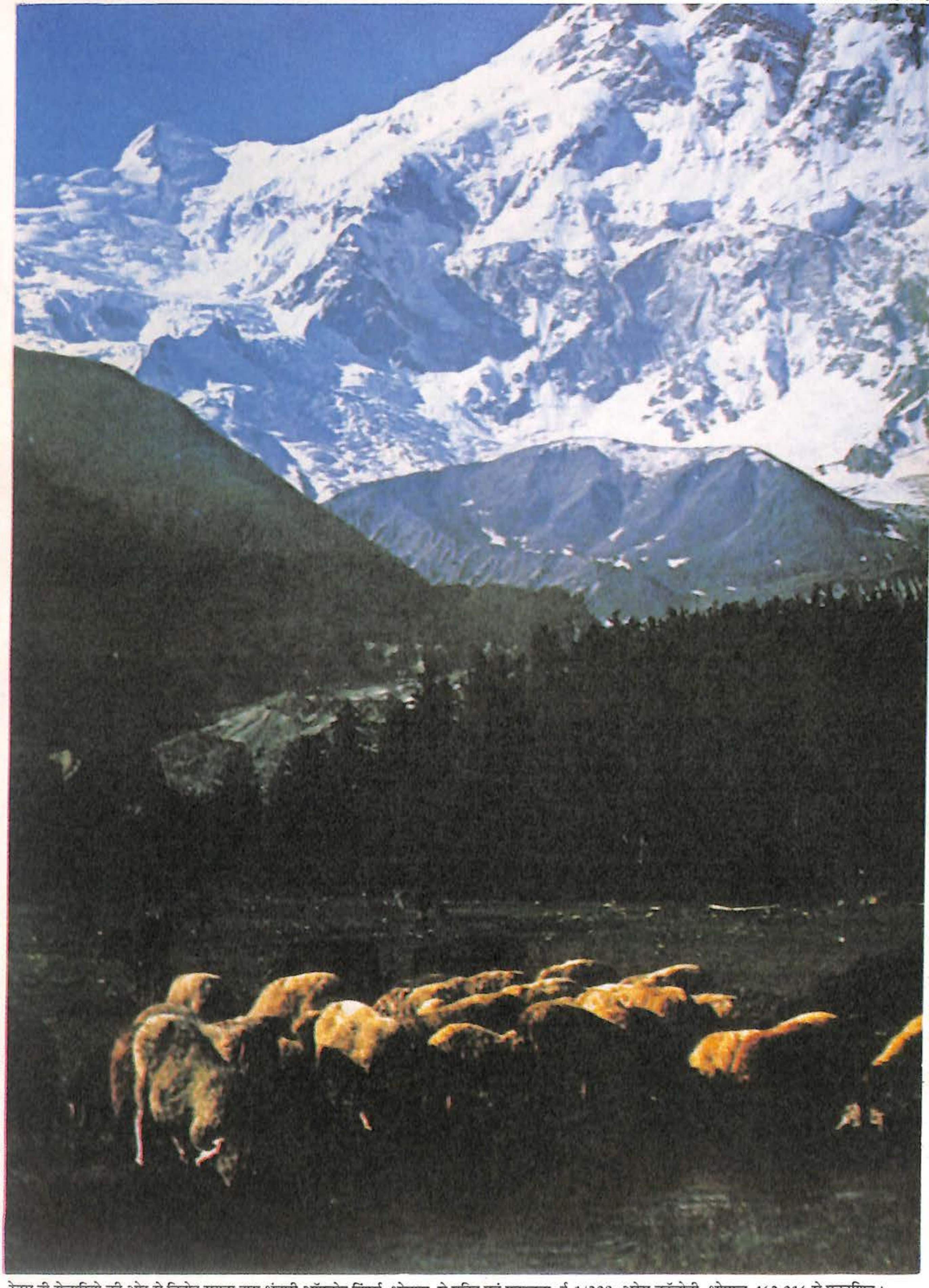


पोखरा (नेपाल) के पास फेवा ताल का दृश्य। हिमालय की सुंदरता व शांति का प्रतीक।



धान की खेती। खेतों को धान के पौधे लगाने के लिए तैयार किया जा रहा है।

पंजीयन क्रमांक 1317/सी/85 के अंतर्गत भारत के समाचार-पत्रों के रजिस्टार द्वारा पंजीकृत।
डाक पंजीयन क्रमांक BPL DN/MP/431/90



रेक्स डी रोजारियो की ओर से विनोद रायना द्वारा भंडारी ऑफसेट प्रिंटर्स, भोपाल से मुद्रित एवं एकलव्य, ई-1/208, अरेरा कॉलोनी, भोपाल-462 016 से प्रकाशित।
संपादक : विनोद रायना।